ॐ

भक्त वैजयन्ति के तृतीय पुष्प का

प्रथमपत्रम्

मंगलम

मोक्षसाधन सामग्र्यां भक्तिरेव गरीयसि:

ॐ श्रीशं विश्ववीजं झपहय सनकं राजहंसं कपुत्री क्रोडं यज्ञं सुरेशं कपिल गुरु हरीन्नाभिपुत्रं पृथुञ्च। सिंहं कूर्मं रुगन्तं मदनमदहरां वामनंविप्रवर्यं श्रीरामं व्यास कृष्णाऽजनज कलिहरान्दे वदेयान्ननामि। मत्स्याश्वपाङ्गज विनारद राजकोल यज्ञेश्वरा: कपिलदत्तहरिप्रधाना: राजेन्द्र सिंहवर कच्छपवैघरामा विप्रौघनुर्धर विदागतकल्किमुख्या:। झपाश्वौ कौमारं खगममरपूज्यं मनुवरंवराहं यज्ञेशं नरकपिलदत्तान्हरिवृपा। पृथुं सिंहंकूर्मं रुगरिललना वामनमुनीन्रमेशं व्यासं कृष्ण जिनचरमान्नोमिसुहृदान। मत्स्याश्वास्यसनत्कुमारविहगब्रह्मात्मजादिस्वराट्। घृष्टी यज्ञ सखानरस्य कपिला त्रेयस्वभूनाभिजान। पृथ्वीनाथ नृसिंह कूर्मभिषग गम्यावटुक्षत्रहंता श्रीराम गुणज्ञ कृष्ण सुगत कल्कोन्नमामिसहम्। नामसङ्कीर्तनंयस्य सर्वपापप्रणाशनम। प्रणामोदुक्खशमनस्तं नमामि हरिंपरम्। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। इसका बारम्बार कीर्तन करना चाहिये।

तृतीय पुष्प का पत्र २

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। स्मरण—भक्ति का तीसरा साधन है। इसको अनेक प्रकार से कहा है। इस अंग के प्रधानाचार्य सदाशिव हैं।

शिवजी—ये ब्रह्मा से उत्पन्न हैं। सनकादिकों के कनिष्ठ भ्राता हैं। कैलाश पर रहते हैं। इनके शृंगी भृंगी नन्दि आदि गण और कार्तिक, गजानन्द ऐसे दो पुत्र तथा दुर्गा देवी स्त्री है। त्रिपुर दैत्य ने देवों से अजेय होने का वर ब्रह्माजी से पाया। उस ने तीन पुर मय से बनवाये। दस अमृत रस के कुण्ड पुरों में भरवाये। दैत्यों को लेकर उसने देवों को मार भगाये। वे इनके शरण में गये। इन्होंने उनको धैर्य प्रदान किया और कार्तिक शुक्ला १५ के दिन अग्नि अस्त्र से पुर तथा दैत्यों सहित त्रिपुर को भस्म कर दिया। विजय शंख बजा। देवता राजी हो गये। इनकी स्मरण भक्ति के वश हो कर भगवान ने ब्रह्मा के सहित गौवत्स का रूप बना कर त्रिपुर के १० रस के भरे कुण्डों का पान किया था जिससे इनको विजय प्राप्त हुई थी।

एकदा इनके समीप नारद, परशुराम, देवल, पर्वत, ब्रह्मचर्य के मद में मस्त होकर परस्पर झगड़ते हुए गए और उन्होंने इनकी प्रार्थना कर के कहा—प्रभो! हमारे में अखण्ड ब्रह्मचारी कौन है आप कहें। इन्होंने कहा जब मैं शृंगी नाद करूं तब आप आजाना फैसला हो जावेगा। वे विदा हो गये। इन्होंने भगवान का स्मरण किया उन्होंने उत्तर दिया आप पंचवटी में श्री रामचन्द्र के समीप जाकर फैसला करावें। भोले प्रसन्न हो कर परिवार सहित पंचवटी में गये वहां भगवान राम नहीं थे। सीताजी हँस कर के लक्ष्मण से बातें कर रहीं थी। इस दृश्य से एकत्रित होने वाली जनता को संशय हो गया। लक्ष्मण ब्रह्मचारी न रहा। इन्होंने शृंगी नाद किया। श्री रामजी, नारद, देवल, परशुराम, पर्वत इन्द्रादि देव सब आ पहुंचे। उन्होंने भी लक्ष्मण के इस दृश्य को देखा। श्री राम के अतिरिक्त सब विस्मित हो गये। लक्ष्मण ने उठ कर सब को प्रणाम किया। आगमन का हेतु भी पूछा। बाबाजी ने अभिप्राय प्रगट किया। श्री रामजी ने आज्ञा करी कि किसी मरे हुए का

खण्ड शव उठा लाओ। देव पहुँचा और मरे तोते का शरीर (शव) उठा लाया। भगवान ने कहा जिसको ब्रह्मचर्य का अभिमान है वह निज की पुण्याई से इसको सजीव करदे जिसकी पुण्याई से तोता सजीव हो जावे वही अखण्ड ब्रह्मचारी है। नारद ने कहा मैं अखण्ड ब्रह्मचारी होऊं तो यह सजीव हो जावे, पर वह न उठा। क्रमशः पर्वत, देवल, परशुराम ने भी कहा, पर तोता सजीव न हुआ। भगवान ने लक्ष्मण से कहा। उसने भी निज की पुण्याई प्रदान करी। तोता सजीव हो गया। सब मुक्त कण्ठ होकर लक्ष्मण की प्रशंसा करने लगे। शिवजी प्रसन्न हो कर भगवान का स्मरण करते हुए कैलाश पर पधार गये।

वृकासुर ने शिव का तप किया। उन्होंने उसको वर दिया कि जिसके मस्तक पर तू हाथ रक्खेगा वह भस्म होवेगा। उसने इनके मस्तक पर हाथ रख कर भस्म करना और पार्वती को ले आना ठीक समझ कर कहा; देव! आप जरा ठहरिये इस वर को यहां ही अजमा लेता हूँ। बाबाजी भाग निकले त्रिलोक में फिर गये। इन्होंने उससे बचने की ठौर न पाई। पश्चात स्मृति हो जाने से भगवान के शरण में पहुंचे। उन्होंने इनको आश्वासन देकर बैठाये और ब्रह्मचारी के रूप से उसको कहा। पागल की तरह कहां भगा जा रहा है? दक्ष के श्राप से शिव शक्ति हीन हो गये हैं। वे झूंठे हैं। शिवने तेरे को वर दे कर तेरे हाथ पर अग्नि रख दी है। तू दूसरे हाथ से सम्हाल वह गरम लगता है क्या? जब हाथ में अग्नि नहीं है तब उससे कोई जलेगा कैसे? इस छोटी सी परिक्षा के लिए तैने इतना परिश्रम किया तू पागल नहीं तो क्या है। प्रथम तू अपने मस्तक पर हाथ रख कर देख ले क्या होता है। उसने मस्तक पर हाथ रख दिया और वह भस्म हो गया। उन्होंने फिर शिवजी को समझाये। मेरे भक्तों को जो

कष्ट पहुंचाता है वह कदापि सुख नहीं पाता है। शिवजी कैलाश पर पधारे।

एकदा शिवजी ने स्मरण भक्ति का उपदेश दिया वह यह है। संसार में सब कहते हैं "कोई किसी का नहीं"। वास्तविक दृष्टि से यह ठीक है पर व्यवहारिक दृष्टि से एक दूसरे का रक्षक तथा भक्षक पाया जाता है। अतः एक दूसरे का होना सिद्ध होता है। यह है तो ठीक पर जीव परतन्त्र और निःसत्व है। इसका सत्व ईश्वर है। उनकी सत्ता के बिना जीव निज की सत्ता का पालन नहीं कर सकता। अतः कोई किसी का नहीं। है तो सब का ईश्वर। उन्होंने श्री मुख से भी कहा है देखिये गीता शास्त्र। नवमा अध्याय के मंत्र से १६–१६ तक। सत्तावान स्वामी होता है। उनका स्मरण करना ही श्रेयस्कर है स्मरण करने के साधन को योग कहते हैं। उसका क्रम। ' सदा एक रस एक अखण्डित आदि अनादि अनूप, कोटिकल्प बीतत नहीं जानत विहरत युगल स्वरूप। भगवान इच्छा द्वारा प्रकृति के रूप में परिणित हुये। फिर वे उसके उपभोक्ता भी होगये। भोग्य भोक्ता पदार्थ को प्रकृति पुरुष माने हैं। विध्यनादि उभावपि के अनुसार ये अनादि हैं। मैं एक का अनेक होजाऊँ यह इच्छा। यह निजके ब्रह्मानन्द को जानने के लिये उत्पन्न हुई। यह उन से पृथक नहीं। रुपान्तर से इनको क्षेत्र क्षेत्रज्ञ भी कहते हैं। उनको जानने के लिये ३२ मार्ग ब्रह्मविद्या के नाम से प्रसिद्ध है। पर वे जाने नहीं जाते। उनके एक के बहुत होने में उनकी पहचान के लिये अनेक झगड़े खड़े हो गये। वास्तव में क्या है वह जमता नहीं। चतुर इस झगड़े को सर्वोत्कृष्ट मान कर अन्य झगड़ों को त्याग देता है। बाबाजी का कथन है कि तुम श्रेय चाहते हो तो झगड़े को छोड़ कर उनको प्राप्ति का साधन करो। साधन आठ श्रेणी में विभक्त है। १. यम २. नियम ३. आसन ४. प्राणायाम ५. प्रत्याहार ६. धारणा ७. ध्यान

८. समाधि। यम — किसी प्रकार किसी का मन न दुखाना, मधुर और यथार्थ बोलना, स्वामी की आज्ञा बिना पदार्थ को न उठाना और न उसके उठाने की इच्छा रखना, ब्रह्मचर्य का पालन करना, निज के शरीर के काम में आने वाली वस्तु के अतिरिक्त वस्तु का संग्रह नहीं करना। नियम - सब इन्द्रियों को पवित्र रखना तथा लाभ सन्तुष्ट रह कर न्यूनाधिक में विचल न होना, विषयों को त्याग करना, श्रीहरी के चरित्रों का अध्ययन करना, सब्लना भगवान के अनुसार करना। आसन — चौरासी माने हैं। इनमें से निज के अनुकूल को रखना, अथवा पद्मासन करना, सिद्धासन ये दो आसन मुख्य माने हैं। सिद्धासन - बांये पैर से शिश्न को और दाहिने से गुदा को दबा कर बैठना, दृष्टि को नाक के अग्र भाग पर रखना। इसके द्वारा आनन्द प्रदायी उन्मनी सिद्धी मिलती है। पद्मासन दो प्रकार का है। बद्ध, मुक्त, दोनों ही समान फल दायक हैं। बद्ध में कुछ विशेष है। दोनों पैरों को दोनों जंघाओं पर रक्खे। बांये हाथ को पीछे लेजाकर उससे बांये पैर के अंगुठे को और दाहिने से दाहिने पैर के अंगुठे को पकड़े। मुक्त में पैरों को पूर्ववत् रखना पर हाथों को खुला रखना। इसके सिद्ध होने के पश्चात प्राणायाम करना। प्राणायाम इसका साधन नाड़ियों द्वारा है। देह में छोटी बड़ी अनेक नाड़ियां हैं, इनमें १४ बड़ी हैं वे भी योग में सहायक होती हैं। उनके नाम इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना, गान्धारी, गजजिह्वा, सरस्वती, पूषा, कुहू, पयस्विनी, शंखनी अलंबुषा, वारुणी, विश्वोदरी, यशस्विनी, इनमें योग का पूर्ण अनुभव कराने वाली इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना है। सुषुम्ना—मूलाधार से उठ कर अण्डाकार नाड़िचक्र (मणिपूर) नाभि के मध्य भाग से होती हुई ब्रह्मरन्ध्र तक पहुँचती है। इसके बांई ओर इड़ा, दाहिनी ओर पिंगला भी मूलाधार से उठ कर स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध इनको धनुषाकार से वृत्त

करती हुई आज्ञा चक्र के ऊर्ध्व भाग पर सुषुम्ना में मिली है। जिसको योगी त्रिवेणी, त्रिकूट कहते हैं। आगे बढ़ कर इड़ा नासिका के बांये पिंगला दाहिने छिद्र में पहुंची। सुषुम्ना ब्रह्म-रन्ध्र तक पहुँची है। इड़ा चन्द्र स्त्री, पिंगला सूर्य स्त्री, सुषुम्ना सूर्याग्नि सोम की है। सुषुम्ना मेरुदण्ड के छिद्र में हो कर गई है। दूसरी उसके आस पास। वज्रणी शिश्न से उठ कर शिर तक पहुंची है। इससे चित्रिणी माकड़ी के जाला के सम लिपट रही है। इससे सब चक्र गुंथे हुये हैं। इसके सम भाग में विद्युत् सम कान्ति वाली ब्रह्म नाड़ी है। यह मूलाधार स्थित महादेव के मुख से निकल कर सहस्रदल पर्यन्त गई है। इससे प्राणायाम, ध्यान, धारणा, कुण्डली का उत्थान, आदि क्रिया की जाती है। देह को जीवित रखने वाला प्राण है। इसके सूखने पर कुछ भी नहीं है। वह दस प्रकार का है। उनमें प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान ये पांच अन्तस्थ हैं। नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त ये चार बाह्यस्थ हैं। धनञ्जय सर्व व्यापी है। प्राण एक हो कर कर्म द्वारा उसके नाम दस हैं। स्थान भी भिन्न है जैसे—प्राण श्वासो-च्छ्वास लेना, अन्न को पचाना, पृथक् करना, रस को रस, वीर्य, स्वेद, मल-मूत्र के रूप में परिणित करना। अपान—अग्नि प्रदीप्त करना, जोड़, सन्धि को ठीक रखना। समान—रसादि पदार्थों को नाड़ियों में पहुँचाना, देह को पुष्ट बनाना। उदान—अन्न को काफी परिपक्व करना। व्यान—इन्द्रियों की क्रिया को सम्पन्न करना। नाग—उद्गार लाना। कूर्म—संकोच करना। कृकल—क्षुधा, तृषा बढ़ाता है। देवदत्त—निद्रा तन्द्रा को उत्पन्न करता है। धनञ्जय—सीमा से बाहर हुये सत्व का शोषण करता है। प्राण, अपान का संचार इड़ा पिंगला द्वारा होता रहता है। अतः प्रथम—नैति, धौती, बस्ती लौलिकी, त्राटक, कपालभाति, इन षट् कर्म द्वारा नाड़ियों को शुद्ध करना चाहिये अथवा मुक्त पद्मासन से स्थित हो कर दाहिने

हाथ से नासिका का दाहिना स्वर दबावें, बांये स्वर से वायु को पेट में भरें। उसको दाहिना से निकाले। उदर में ठहरने का अवकाश न देवे। दूसरी बार दाहिने से भर कर बांये से निकाले। इस प्रकार दस बार करे लोम विलोम से। इस क्रिया से भी नाड़ियां शुद्ध होती हैं। इस क्रिया को नियमबद्ध की जाय तो वह प्राणायाम की सीमा को पहुँच जाती है। प्राणायाम—यह योग का चौथा साधन है। इसके भेद—सूर्य भेदी, उज्जाई, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूर्छा, केवली, सहिता आठ हैं। शीतली प्राणायाम—होठों को कुछ मिला कर जिह्वा से बाहर के वायु को पेट में पहुँचावे, फिर मुख बन्द करके जितनी देर बन सके उसे ठहरावे, फिर उसे नासिका द्वारा निकाले ऐसा अष्ट प्रहर में दो बार करे। यह भी नाड़ियों को शुद्ध करने वाला श्रेष्ठ मार्ग है इसको पवित्र स्थान में भोजन के प्रथम एकाग्र चित्त से करना चाहिये। सहिता (उड्डाख्य) की क्रिया—बांये छिद्र से अथवा वायु के स्वर द्वारा वायु को भरे उसका नाम पूरक है। इसको ॐ या इष्ट मन्त्र से करे। पश्चात कनिष्ठिका और अनामिका से बन्द करे। वायु को रोके इसका नाम कुंभक है। इसका समय पूरक से चतुर्गुण है। रोके हुये वायु को दाहिने स्वर से निकाले उसका नाम रेचक है। इसका समय पूरक से द्विगुण और कुंभक से आधा होता है। यथा पूरक ४ कुंभक १६ रेचक ८ मात्रा का होना है। साध्य होने पर इसको पू० ८ कुं० ३२ रे० १६ इस प्रकार बढ़ाते रहना 'शनैः शनैरुपरमेत' फिर द्विगुण करते जाना। प्राणायाम को इस प्रकार करने से सगर्भ तथा बिना बीज के ॐ या इष्ट मन्त्र के द्वारा किया निगर्भ हो जाता है इसको बढ़ाते बढ़ाते इतना बढ़ाले कि उसका कुंभक तीन घंटे का हो जावे उस साधक के सामने सिद्धियां खड़ी हो जाती हैं। इसको परिचयावस्था कहते हैं।

कुण्डली का उत्थान इस क्रिया से हो जाता है। त्रिकूट का

दर्शन भी हो जाता है। इससे त्रिपताक का दर्शन हो कर त्रिगुणात्मिका प्रकृति का दर्शन हो जाता है। आभ्यन्तर वृत्ति, स्तम्भवृत्ति, वाह्यवृत्ती, वाले पूरकादि है। प्रत्याहार—इन्द्रियां निज के विषयों को त्याग करके मन के वश में हो जाय। ५४ सा० पा० पातञ्जली इसकी प्राप्ति का लाभ तीन घंटे के प्राणायामी को अथवा कुण्डली को अनाहत चक्र तक पहुँचाने वालें को होता है। धारणा—इंद्रियों को वश में लिए मन को दृढ़ स्थान में ठहराया जावे। वि० पा० पा० ध्यान—जिसकी धारणा द्वारा धारणीय पदार्थ में चित्त की एकाग्र-स्थिति का हो जाना। २ वि० पा० पा०। सहस्रार में निर्गुण का अथवा सगुण का ध्यान करना इनकी चरम सीमा को समाधि कहते हैं। समाधि—दृढ़ ध्यान के हो जाने से ध्येय ध्याता का अभिन्न भाव का होना है। प्रत्याहार का स्वतन्त्र साधन—प्राणायाम सिद्ध होने के पश्चात अश्विनी मुद्रा द्वारा कुण्डलिनी को जागृत करे फिर उसे अनाहत चक्र पर पहुंचादे इस क्रिया से वह स्वयं सिद्ध हो जाता है। कुण्डलिनी—लिङ्ग और गुह्य स्थान के मध्य भाग में अधोमुख योनि मण्डल है उसमें साढे तीन लपेटे लेकर सर्पवत् पूंछ को मुख में दबा सुषुम्ना के छिद्र को रोके रहती है। उससे नाद की उत्पत्ति होती है इसका दूसरा नाम कन्द है। उत्पन्न नाद को पश्यन्ति फिर मेघ गर्जनवत् होकर कण्ठ में पहुंचते ही स्वर शब्द के रूप में हो जाता है उसको वैखरी कहते हैं। वह फिर प्रत्येक स्थानों में विभक्त होने से शब्द वाक्य पद, वेद, शास्त्रादि होते हैं। कुण्डलिनी—त्रिगुण जननी समस्त चक्रों में भ्रमण करती है। इच्छा, ज्ञान, क्रियात्मिका है। इसको वश करना ही योग की पूर्ति है। नाद की अवस्था परा, पश्यन्ति, मध्यमा, वैखरी है। परा—तुरीया है। पश्यन्ति—स्वाधिष्ठानस्थित अवस्था को। सुषुप्ति—कारणावस्था, मध्यमा—अनाहदनाद की गति का नाम है उसको स्वप्नावस्था कहते हैं। कण्ठस्थित नाद को

वैखरी, जागृत अवस्था मानी है। इसकी चाल बाहर भीतर है। बाहर से श्वासोच्छ्वास और भीतर से आत्मतत्व का ज्ञान कराती है। अतः श्वास को रोकने से वह स्वयं अन्तर्मुखी हो जाती है। इसका साधन—बांये पैर की एडी से योनि देश को दृढ़ दबानो, दाहिने पैर को सीधा करना उसको दोनों हाथों से दबाये रखना वह उठने न पावे। दाढ़ी को कण्ठ में लगा कर श्वास के वायु को पेट में रोके फिर धीरे धीरे निकाले ऐसा करने से कुण्डली सीधी हो जाती है। बारह इंच लम्बा, तीन इंच चौड़ा श्वेत वस्त्र नाभि पर रखले, उस पर सूत बांध दे फिर प्राण को अपान में युक्त करके गुह्य को सुकड़ाता फैलाता रहे। साथ में कुंभक करतार है। इससे वह सुषुम्ना की ओर पहुंचती है। और भी—सिद्धासन से बैठ कर डाढ़ी को हृदय पर दृढ़ करे, हाथों की कोणियां डाढ़ी के आस पास रख कर हृदय पर जमादे और मुष्टियां बांधले कुंभक करके अश्विनी मुद्रा से गुह्य को सुकड़ाता फैलाता रहे। वह इस प्रकार जाग जाती है। इसका ध्यान भी होता है। यह सहस्र दल चक्र को स्पर्श करले उसका नाम ब्रह्मानन्द है। वैसे तो ६ चक्र हैं पर प्राणतोपणी ने ६ माने हैं। यथा—गुदा लिंग के मध्य प्रदेश को योनि कहते हैं। वहां पर मूलाधार चक्र है। लिंग के मूल में स्वाधिष्टान। नाभी में मणिपूर। हृदय में अनाहद। कण्ठ में विशुद्ध। भ्रकुटी के मध्य में आज्ञा। तालु में ललना। ब्रह्म रन्ध्र में गुरु। महाशून्य में सहस्रदल। साधन द्वारा भगवत् प्राप्ति का नाम भक्ति है। 'मूलाधारं चतुष्पत्रं गुदोर्ध्वेवर्तते महत् लिंग मूलेतु पीताभं स्वाधिष्ठानंतुषट्दलम्। तृतीयंनाभिदेशेतु दिग्दलं परमाद्भुतम्। अनाहतमिष्टपीठं चतुर्थं कमलं हृदि। कलापत्रं पञ्चमन्तु विशुद्धं कण्ठ देशतः। आज्ञायां षष्टकंचक्रं भ्रुवोर्मध्ये द्विपत्रकम्। चतुःषष्टिदलं तालुमध्येचक्रंतु सप्तमम्। ब्रह्मरन्ध्रे ष्ट-मंचक्रं शतपत्रंमहाप्रभम्। नवमं तुमहाशून्यं चक्रंतुतपरात्परम्।

तन्मध्ये वर्ततेपद्मं सहस्रदल मद्भुतम् । हरिरुपासनाचात्र सदैव सुखरुपिणी । नतुसाधनभूतासा सिद्धिरेवात्र सायतः । साधनानि तु सर्वाणि भक्तिज्ञानविवृद्धये । नैवान्य साधनंभक्ति फलरूपा हिसायतः इति वृहदारण्यकंभाष्ये । वेदे रामायणे चैव पुराणेभारते तथा । आदावन्तेचमध्ये च हरिः सर्वत्रगीयते । मध्याचार्य । सदागमैक विज्ञेयं समतीतं क्षराक्षरम् । नारायणंसदावन्दे निर्दोषाशेष-सद्गुणम् विष्णु तत्वनिर्णये । इत्यलम् ।

पत्र ३

निकुंभ—यह स्मरण भक्त था । शिवजी का गण था । कहते हैं शिवजी ने स्वयं को प्रतिज्ञा को भंग करके जीवों के हित के लिए पार्वती से विवाह किया और श्वसुर गृह में ही निवास किया। एकदा सासू को नाराज पाकर इससे कहा । निकुंभ ! तू काशी नरेश से काशी खाली कराले मैं वहां रहूँगा । यह गया । इसने नाई से कहा मैं तेरा कल्याण करूंगा । तू मेरी स्थापना कर । उसने इसकी स्थापना करी और त्रिकाल की बातें बतला कर जनता को मुग्ध करी । दुःख दूर करना, पुत्र देना आदि कार्यों द्वारा प्रसन्न हो कर वहां के राजा ने राणी को भेजी । वह चार पांच बार गई पर उसको पुत्र होने का आशीर्वाद न मिला । राजा ने क्रोध के वश होकर उसकी स्थापना को उठा दी । इसने श्राप दिया कुछ दिन के लिए यह नगर सूना हो जायगा । भयभीत हो कर राजा प्रजा भाग निकले । शिवजी काशी में जा बसे । वह फिर बस गई शिव राम नाम से पापियों को तारने लगे । पार्वती ने प्रश्न किया राम कौन है और इनके नाम में तारका शक्ति कहां से आई । भोले बाबा ने देवी को समग्र राम चरित्र सुनाया वह बहुत राजी हुई ।

कुवेर—यह स्मरण भक्त था । अहीर था । परिवार वाला था । साधु सेवी था । गौ सेवक भी था । एकदा साधुओं की जमात

आगई यह उनको सेवन में लगा। घर की गौऐं भूखी रह गई। गोविन्द ने ग्वाल के रूप से गौएँ चराई उनको जल पिलाया। घर को लाकर घास काट कर उनको डाला वे फिर अदृश्य हो गये। यह साधु सेवा से सन्ध्या को निवृत्त होते ही घर को गया। तलाश करी। गौओं को तृप्त देख कर वहुत राजी हो गया। यह काम प्रभु का किया जाना समझा। गोविन्द ने इसको प्रत्यक्ष दर्शन देकर अपनाया। इत्यलम्

कमध्वज—यह स्मरण भक्त था। यह महाराणा के विश्वासी सेवक विजयसिंह का पुत्र था। इसके तीन भ्राता और भी थे। इनका पिता युद्ध में मारा गया। पश्चात् ये सेवकाई करने लगे। यह ब्राह्म मुहुर्त में उठकर वन में चला जावे। सघन तरुतल में पद्मासन से बैठकर राम नाम का जप करे। ध्यान करे। समय पर घर को भोजन करके फिर वहां ही चला जावे। राम मन्त्र का जप करे। इस प्रकार वहुत दिन बीते। एकदा इसके भ्राताओं ने कहा प्रिय भ्रात! तू पागल तो नहीं हो गया है। हम राणाजी के सेवक हैं। सेवकाई से वेतन मिलता है उससे निर्वाह चलता है। तू नित्य सेवकाई छोड़ कर चला जाता है। राणाजी सुन लेंगे। वे नाराज हो जावेंगे। फिर न जाने वे क्या करेंगे। यह बोला—प्रिय भ्राताओं! जिनका दृढ़ विश्वास अवधेश श्री राम के चरणों में है उनको मित प्रदाता राणा से कौन प्रयोजन है। किञ्चिनमात्र भी नहीं। मेरा स्वामी कोसलेश है राणा नहीं। मैं उनकी सेवा करता हूँ। राणाजी की सेवा आप करते हैं। एक मैंने नहीं करी तो आप का वेतन वे क्यों वन्द कर देवेंगे। उनकी सेवा मेरे पूर्वज करते आये उनसे वे राजी न हुए तो मेरी सेवा न होने से नाराज भी न होवेंगे। वे मेरा वेतन वन्द करदे। भ्राता सुन कर राजी हो गये। हमारे कुल में यह राम भक्त है। वे वोले तात! तेरा काम वहुत श्रेष्ठ है तैंने अमित प्रदाता श्री राम के चरणों का शरण लिया।

पर रात्रि में एकाकी तू वहां मत रह घर को रहे कर व्यवहार दृष्टि में तेरा वहां रहना हमको नीचे दिखाना है। वह बोला—आपमें मैं कनिष्ठ हूँ। आपके सामने मेरा आयुष्य पूर्ण होना असम्भव है। कदाचित् ऐसा ही हुआ है तो आपको मेरी मृत्यु के प्रहर एक प्रथम समाचार मिल जावेगा। श्री राम भक्तों को सताने की शक्ति किसी में भी नहीं है। घर में न रह कर मुझे वन के रहने में सुविधा है। ऐसा कह कर वह चला गया। कुछ दिन बाद इसका आयु पूर्ण हो गया। यह देह को त्याग करके वैकुण्ठ को गया। भगवान की आज्ञा पाकर चार वानर आये। इन्होंने चिता रची, वे उसमें कमध्वज के शव को रखने लगे कि इतने में भ्राता और नागरिक आगये। वानर दूर जा बैठे। शव को उन्होंने सम्भाला। शव का अग्नि संस्कार किया। वानर वापस चले गये। भ्राता घर को गये। इसकी भक्ति की महिमा दिगन्तर में फैल गई। अग्नि संस्कार के धूम से वहां के रहने वाले भूत प्रेतों का भी मोक्ष हो गया। इत्यलम्।

गिरधारीसिंहजी—यह स्मरण भक्त मेवाड़ देश के नान्दसा ग्राम निवासी क्षत्रिय है। आप दाता नाम से प्रसिद्ध महात्मा हैं। यशस्वी, प्रतिष्ठित, सनातनी, परोपकारी हैं। कहते हैं ये बाल्यावस्था से ही हरिपरायण हैं। इन्होंने मिनेटरी की नौकरी करी थी उस समय इनको भक्त भयहारी भगवान ने उपदेश दिया था। जब ये निज के पहरे को त्याग करके कथा श्रवण करने चले गये तब पीछे से इनकी जगह श्री हरि ने पहरा लगा कर पहरा चेक किया था। आप गृहस्थ जीवन में रहकर श्री हरि के चरणों में दत्त चित्त हैं। जयपुर नगर में इनके दर्शन ग्रन्थ कर्ता को हुये थे।

गुलाबरामजी—यह स्मरण भक्त मारवाड़ देश के रेण ग्राम निवासी रामस्नेही हैं। ये सिद्ध महात्मा, सुशील, समदर्शी, परोपकारी, राजमान्य, समग्र प्राणि प्रिय है।

रूपकँवरबाई—यह स्मरण भक्त मारवाड़ के बहाला ग्राम की शेखावत क्षत्रिय कन्या है। इसको जनता सतीभाई के नाम से पुकारती है। दस वर्ष होने आये इसने अनशन व्रत द्वारा प्रभु श्री राम को साध्य कर लिए हैं। इसकी प्रशंसा मुक्त कण्ठ से जनता कर रही है। कलेवर दर्शनीय है। परोपकार शील है।

श्रीपति—यह स्मरण भक्ति का विश्वासी पात्र था। अनेक पण्डितों के सहित यह सम्राट अकबर का सभासद् था। इसका चित्त श्री हरि के चरण कमलों का भ्रमर हो रहा था। कविता बनाने कहने का प्रसंग आता। अन्य पण्डित सम्राट की यह भगवान की प्रशंसा करता। उनको पारितोषिक मिलता उसमें इसको प्रथम श्रेणी का मिलता। एकदा पण्डितों ने पूर्ति के लिए एक समस्या रक्खी। उसकी पूर्ति करके सम्राट को सुनाई। इसने भी सुनाई वह यह थी 'सरनागत श्रीपति श्रीपति की नहीं त्रास है काहुहि जब्बर की। जिनको कछु आश नहीं हरि की सो करों मिलि आस अकब्बर की, इस कविता से प्रसन्न होकर सम्राट ने श्रीपति को ही पारितोपिक दिया अन्य पण्डितों को नहीं। इसको भगवान ने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर अपनाया। इत्यलम्!

पत्र ४

वर्द्धमान—यह श्रीराम भगवान के पवित्र नामों का चिन्तन किये करता था। इसकी स्मरण भक्ति से हनुमानजी प्रसन्न हो गये। इसको दर्शन दे कर कहा। राम भक्त तेरी अनन्य स्मरण भक्ति से मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। तू वर मांग अवश्य प्रदान करूंगा। इसने कहा आप वर देना चाहते हैं तो भगवान राम के दर्शन करा दीजिये। उन्होंने सहर्ष भक्त को भगवान के दर्शन करा दिये। यह उनके दर्शनों से कृतार्थ हो गया।

भीम--यह स्मरण भक्त था। कुम्भार था। कूर्म ग्राम का रहने वाला था। इसने अहर्निश नामों का स्मरण किया जिसमे भगवान ने इसको मुक्ति प्रदान करी।

रामचरणदासजी—ये स्मरण भक्ति के आचार्य थे। राम नाम का रटन अहर्निश करते थे। इनका जन्म सं० १७७६ वि० के मार्गशीर्ष शुक्ला चतुर्दशी रविवार का है। इन समर्थ आचार्य द्वारा रामस्नेही मत का प्रादुर्भाव हुआ है। इनकी वाणी रसीली सारगर्भित है। यथा 'जो जो बातां ऊपजे, सो सो कह बताय, सो सो कहे बताय, और की खरी न भावे, अपणी खोटी होय, ताको खरी बतावे, ताते उससे चुप रहो, बोल्यां कहा वसाय, राम चरण संसार को, मुख पकड़ो ना जाय। ये आयु पूर्ण करके साकेत धाम को पधार गये।

गंगल—यह भगवान श्री राम का स्मरण भक्त था। श्री राम जी ने इसको दर्शन दे कर कृतार्थ किया। एक महात्मा ने इसको कहा मन्मनाभवेति से स्वामी के सामने रहना। अन्यथा अनर्थ इसमें उदाहरण—एक दक्षिण देश का व्यक्ति हाकिम हो कर मारवाड़ में पहुँचा। उसने मारवाड़ी सेवक रक्खा। साहब ब्राह्मण था, भोजन हाथ से बनाता था, एकदा उसने चूल्हा चैतन करके स्नानार्थ गरम जल किया पश्चात् दाल के लिए जल उकाला उसमें हल्दी आदि मसाला दाल डाल दिये। आटा की पिण्ड बनाली। बाद उससे कहा बसंतियाजी हां हजूर तू दारला उंघा नाहींतर श्वान ये तील लोट खाउं जा तील मी आंगुल करी न अत: ये तो वह इसे समझा नहीं सिर्फ जी हां हजूर कह दिया। यह स्नान करने गया। उसने मनमाना भावार्थ समझ लिया पड़ोसी से सुफेती पोतने की कुञ्ची लाया। भगोनी में दाल लेकर कमरा पोत दिया आटा कुत्ते को खिला दिया। हाकिम ने आकर देखा पूछा भी।

उसने काम किया उनको दिखाया हाकिम ने विचारा स्त्री बिना काम नहीं चले। उन्होंने इससे कहा अरे! तू हमारे सासरे जा स्त्री को ले आ। तू हमारी बोली में समझता नहीं है अतः एक में हां एक में ना कहना अधिक मत बोलना। यह उनके सासरे गया हाकिमजी का ससुरा बोला बसन्तिया आया। जी हां हजूर। वे नहीं आये जी नहीं हजूर। वे बीमार हैं जी हां हजूर। अच्छे नहीं हुये जी नहीं हजूर। मर गये जी हां हजूर। उनकी स्त्री का मुण्डन कराया रोने लगे। उसे विदा कर दी घर सम्हालो उसे ताला खोल क़र इसने घर में बैठादी। वह रोने लगी। स्त्रियां भी आकर रोने लगी। वह कचहरी में पहुँचा। उन्होंने कहा अरे आगया जी हां हजूर। स्त्री नहीं आई जी नहीं हजूर। बीमार है जी हां हजूर। अच्छी नहीं हुई जी नहीं हजूर। मर गई जी हां हजूर। ये कचहरी बन्द करके रोते हुये नदी पर गये मुण्डन कराया जनता भी आगई रोने लगे घर को गये। वहां एक स्त्री ने उससे पूछा अरी तू क्यों रो रही है। उसने उत्तर दिया हाकिम साहब। वह बाहर आगई उनसे पूछा आप क्यों रोते हैं। मेरी स्त्री मर गई। सुनकर वह खूब हंसी। जनता ने पूछा अरी तू क्यों हंसी। उसने कहा जैसा तमाशा मैंने आज देखा वैसा कभी नहीं देखा था। स्त्री इनको, ये स्त्री को रो रहे हैं। वाह रे, यह खूब रही। सब ने रोना बन्द कर के हंसना शुरू किया। ऐसा किसने किया। नोकर ने। बुलाओ उसे। वह आया। क्योंरे तैंने यह क्या किया। आपने जैसा कहा वैसा किया। एक बात में हां और एक बात में ना इसमें मैंने क्या अधिक किया इतने पर आप लोग रोओ, मरो, जिसका मैं क्या करूं। उन्होंने उसको निकाल दिया।

पत्र ५

गोपाल—स्मरण भक्त था। यह महाराज जयमल्ल के नगर में रहता था। इसका निर्वाह भैंस के दूध और फल फूल से होता था।

यह श्रद्धालु था। सन्त सेवी था। किसी महात्मा से 'ॐ हरये नमः' इस मन्त्र का उपदेश इसने ले लिया था। यह अहर्निश इसका जाप करके भैंस को चराये करता था एकदा मन्त्र का स्मरण करने को वृक्ष की छांया में बैठा। महिषी को चोर ले गया। चोर का घर यमुना पार था। इसने उसको ढूंढ़ी। वह नहीं मिली। यह घर को आया माता ने इससे पूछा बेटा! तू आ गया। भैंस कहां है। माता का मन न दुखाने को इसने कहा। अम्ब! मेरे से किसी गरीब ब्राह्मण ने बाल बच्चों के निर्वाह के लिए मांगली। इसने यह भी कहा मैं दान में नहीं लेता हूँ। तीन वर्ष के बाद वापस दे जाउ गा। मैंने उसे दे दी। माता अति प्रसन्न हो गई। अब यह भिक्षा वृत्ति से निर्वाह करने लगा। यह भगवान का स्मरण करता ही रहा। इसकी साधु वृत्ति से भगवान प्रसन्न हो गये। उन्होंने चोर की बुद्धि को प्रेरित करी। उसने भैंस और उसकी दो पुत्रियों को स्नान कराके जेवर पहराया। वे तीनों नदी को तैर कर गोपाल के घर चली गई। गोपाल की माता ने उनकी पूजा करके उनको घर में लेली। दोनों मां बेटा राजी हो गये। स्मरण और सेवा इसने आजन्म नहीं छोड़ी। यह इस लोक के सुख पाकर अन्त में परम पद को गया।

पत्र ६

अन्तःस्मर—यह राजा था। श्री राम का अनन्य प्रेमी, अन्तः स्मरण का करने वाला था। आत्म स्वरूप, हृदयेश. श्री राम का हृदय मन्दिर है। उनका स्मरण उनके सामने ही होता है। होट, दांत, जिव्हा से नहीं। राणी इसकी प्रगट भक्ति स्मरण द्वारा किया करती थी। इसको वह उपदेश भी देती रहती थी। नाथ! आप कभी राम नाम का उच्चारण तो किया करें। उनके स्मरण से पापी भी तिर जाता है। यह उसकी सुन लिये करता पर उत्तर नहीं देता था। एकदा राजा सोया उसके मुख से राम नाम निकल

आया। राणी ने सुना वह राजी होकर दान दक्षिणा बांटने लगी। राजा जाग उठा। इसने उससे पूछा राणी! तुम आज बिना पर्व किस बात की खुशी मनाती है। उसने कहा मेरे परिश्रम की फल सिद्धि में पुण्य हो रहा है। वह क्या। आपके मुख से रामनाम निकला। राजा ने कहा यह बात सत्य है। हां जी सत्य है। अरी जब इससे राम ही निकल गया तब इस में रहा भी कौन। कहते ही राजा का शरीर छूट गया। राणी पश्चाताप करके सती हो गई।

पत्र ७

महेशानन्द—यह अनन्य स्मरण प्रेमी भक्त था। मथुरा में कुटी बना कर रहता तथा भिक्षा से निर्वाह करता था। इसके यहां एक अनाथ ब्राह्मण का लड़का चला आया। उसने इसकी विनय करी। भगवन्! मेरे को माता पिता एक वर्ष का छोड़ कर स्वर्ग का चले गये। ग्रामीण जनता ने मेरे को पाला। इस वर्ष दुर्भिक्ष होने से जनता भाग निकली। भूखा प्यासा मैं आपकी शरण आया हूँ। आप दया शील हैं। मेरी रक्षा करें। इसको दया आगई इसने आश्रम में रहने की आज्ञा दे दी। वह रहने लगा। इसने उसको कहा तू भगवान् राम का स्मरण किया कर। उसने कहा भगवन्! आप यह क्या कहते हैं। बहुत से व्यक्ति गुरू सेवा को सबसे प्रधान मानते हैं। मैं आपकी सेवा करता हूँ और करूंगा फिर मेरे को दूसरा रास्ता स्मरण क्यों बतलाया जाता है। वह क्या आपकी सेवा से अधिक महत्व रखता है। गुरू ने कहा हां बेटा! गुरु सेवा से वह कई गुणा अधिक महत्व रखता है। नाम स्मरण से महान पापी भी तिर जाता है। भगवान की शरण उनके नामों का स्मरण ही मुक्ति का हेतु है। अतः तू संसार समुद्र को तिरना चाहता है तो उनके नामों का स्मरण कर। उसने गुरु का कहना न माना। गुरु का एक शिष्य और भी था वह ग्रामान्तर को गया हुआ था। गुरु ने इसको कहा बेटा! मैं अभी मरूंगा। जब तक

यह न आजावे वहां तक तू शरीर की रक्षा करना। हरे राम इस महा मन्त्र का जप करते रहना। उसको भी मेरी आज्ञा मन्त्र जप करने की सुना देना। ऐसा कह कर गुरु मर गये। इसने वैसा ही किया जैसा गुरु ने कहा था। दूसरा शिष्य भी आ गया। दोनों ने मन्त्र का दो घण्टे तक जाप किया गुरु पुनः सजीव हो गये। उन्होंने नाम स्मरण की महिमा कही। स्मरण से नामदेव ने गौ को, जयदेव ने पद्मावती को, म० तुलसीदास ने द्विज बालक को सजीव कर दिये। सुभद्रा, द्रौपदी, प्रह्लाद आदि भक्तों ने स्मरण द्वारा भयङ्कर आपत्तियों से प्राण बचा लिये। स्मरण के महात्म्य को कहने की शक्ति शेष शारदा में भी नहीं है। यह मृत संजीवनी बूंटी है। प्रमाण में मैं हूँ। स्मरण द्वारा मैं भी जी उठा। 'नाम महात्म्य न सुन्यो, उसकी कितीक बात। सरवर पर गिरवर तरे, ज्यों तरुवर के पात। नहचो आयो नाम को हुई गूजरी पार। प्रेम बराबर योग नहीं, प्रेम समान नहीं दान। प्रेम भक्ति बिन साधना, सब ही थोथा ज्ञान। भक्तन की महिमा अमित, पार न पावे कोय। जहां भक्त जन पग धरे, अड़सठ तीरथ होय। तन, मन, धन कर कीजिये, निसदिन पर उपकार। यही सार है देह का, वाद विवाद बिसार। कहिये न कछु सुनिये सब की, रहिये रस प्रेम के सागर में। प्रभु के चरणों में चित्त ऐसा, जैसा नागर का चित गागर में। बिना प्रेम सब कुछ करो, सो नहीं लागत नीक। विविध भांति भोजन करो, लून बिना सब फीक।'

पत्र ८

बालिग्रामदास—यह और इसकी स्त्री भगवान जगन्नाथजी के भक्त थे। ये वस्त्र बुनने वाले भिल्ल थे। स्मरण करते, कीर्तन करते, सुनते, ये रथ यात्रा करने भी जाया करते। एकदा इनको प्रभु ने दर्शन दे कर कृतार्थ किये। इनके हाथ का भोजन पाया।

द्विज द्वारा भेजी भेंट प्रभु ने ग्रहण करी। इनको नील चक्र पर से दर्शन दिये। आम्र फल पाये। पश्चात उन्होंने इनको वैकुण्ठ में पहुंचाये।

मच्छेन्द्रनाथ—गोरखनाथ, मीननाथ, चरपटनाथ, भरतरीनाथ, रेवणनाथ, वटसिद्धनाथ, जालन्धरनाथ, कानीकानाथ। ये नवु प्रधान 'नाथ' सिद्ध भक्त हुए हैं। इनकी परम्परा भी ऐसी थी।

सुरेन्द्र—यह स्मरण भक्त था। एक मस्त महात्मा ने इसको शिष्य करते समय कहा तात! भक्तों को द्रव्य का संग्रह नहीं करना चाहिये। इसमें महान अवगुण है। एक धनी का कर्जा किसी दीन व्यक्ति पर आता था। उसने पिता पुत्र को बेच कर कर्जा जमा कर लिया। उसकी स्त्री रह गई। वह दुष्टों से आबरू बचाने के लिए भागती फिरे। एकदा उसने मेरा शरण लिया और दुक्ख की कथा कही। मेरेको दया आगई। मैंने पिता पुत्र का मूल्य चुका कर उनको उसके हवाले कर दिये। शेष रहा द्रव्य भी उनको दे दिया फिर मैं निर्द्रव्य हो कर मस्त साधु हो गया। श्री रामजी के नामों का स्मरण करता रहता हूँ। वे मेरे को कभी दर्शन भी देते हैं। इसने सुना यह भी गुरु समान हो गया।

लाखा—यह स्मरण भक्त था। प्रभात में गीता और सन्ध्या को विष्णु सहस्रनाम का पाठ करता था। यह खेती करता था। इसके पति परवार भगवान ही थे। उन्होंने इसको दर्शन देकर कृतार्थ किया।

गजदेवी—यह स्मरण भक्ति की प्रेमि न थी। इसकी माता ने इसको भक्त बनाई। माता को वैकुण्ठ में जाते समय इसने उसे विमान में बैठी देखी थी। यह भी परम पद को गई।

रामनाथ—यह स्मरण भक्त था। वैश्य था। यह प्रथम धनी था पश्चात दरिद्री बन गया। यह दुखी हो धन प्राप्ति के लिए

प्रत्येक व्यक्ति से पूछता रहा मेरे को धन किस प्रकार मिले। एक ने कहा श्वेतार्क के गणपति बनाकर उनकी पूजन करो वे सब से बड़े हैं। उसने वैसा ही किया मोदक का भोग लगाया उसको चूव्हा खा रहा वे कुछ नहीं बोलते। देख कर इसने सोचा. कहने वाला भूल गया इनसे बड़ा चूव्हा है इसकी पूजा करनी चाहिये। उसने चूव्हा को पूजा। एकदा उसको बिल्ली ने धर दबाया। उसने उसको बड़ी समझ कर पूजा। इसको कुत्ता ने भगाई। अब वह उसकी पूजा करने लगा। उसने खाने की चीज को मुंह लगा दिया। स्त्री ने क्रोध करके उसको मार भगाया। उस दिन से वह स्त्री की पूजा करने लगा, स्त्री के हाथ से कुछ नुकशान हो गया उसने उसको मारी वह भाग गई। इसने विचार किया मैं सबसे बड़ा ठहरा मैं मेरी पूजा करूं। एकदा इसने विचार किया मैं कौन हूं। प्रत्येक अंग का विचार करता हूं मेरा देह मेरी इन्द्रियां आदि मेरा, मेरी है इनमें मैं कहां है किसको कहते हैं। मेरे नजर नहीं आता। अब वह पूजापत्री को छोड़ कर मैं के विचार में लगा। विचार शक्ति द्वारा उसको अनुभव हुआ. मैं आत्मतत्त्व हूं। इसका ज्ञान गुरु द्वारा प्राप्त होता है। वह सच्चे सन्त के समीप पहुँचा। प्रथम उसने निज की कथा कही। पश्चात् मैं का प्रश्न पूछा। उन्होंने हंस कर कहा सेठ! तेरा धन चला गया। बुद्धिमान धन की इच्छा नहीं करते हैं। उसमें पन्द्रह दोष रहते हैं—१ दम्भ २ दर्प ३ अभिमान ४ क्रोध ५ हिंसा ६ ममता ७ मोह ८ लोभ ९ काम १० असत्य ११ प्रमाद १२ दुःसंग १३ द्यूत १४ विलासिता १५ आसक्ति। उपदेश देने पर भी उसका दुराग्रह बना रहता है। देख नेत्र बन्द करके। उसने नेत्र बन्द करके उनको देखे जो इसके सामने बडे बडे धनी मर गये थे। वे नरकों में गिरे दुक्ख पा रहे हैं। उन्होंने इससे कहा तात! तू द्रव्य का दुराग्रह मत कर। हमारी ओर प्रथम तू ध्यान दे ले।

धन के मद से सदा पाप बनता है उससे नरक मिलता है। इस दृश्य को देखते ही वह परम निस्पृही हो गया। उसने प्रभु चरण में चित्त लगाया। वह परम पद को चला गया।

पत्र ६

हरिनारायण—यह स्मरण प्रेमी था अतः अहोरात्र स्मरण में रहता था। पिता ने इसको व्यवहार में अकुशल देख कर घर से बाहर कर दिया। माता के प्रेम से घर में रहा और पिता का विश्वास भी पुनः इस पर होने लगा। अब माता पिता इसके भरोसे घर रख कर काशी यात्रा गये। तब इसने गृह सम्पदा साधु सेवा में खर्च करदी। वे यात्रा से वापस आये इसके कर्म से नाराज हो कर इसको निकाल दिया। इसकी स्त्री इसके संग चली। जनता के कहने से यह ग्राम के बाहर कुछ दिन पर्यन्त ठहरा। पश्चात् ये दोनों ही चले रास्ते में भगवती की आज्ञा हुई यह नृसिंहपुर पहुंचा। वहां ठहरा। एकदा नदी पर स्नान करने को गया। स्नान करके ध्यान करने को बैठा। नदी में बाढ़ आ गई। यह बालु में दब गया। अन्नपूर्णा ने सुना अत्यन्त दुखी होकर भगवान् नृसिंहजी की प्रार्थना करी। भ० नृसिंह ने नारद का रूप ले कर उसको उपदेश दिया। बाढ़ सात दिन में उतरी। यह बाहर निकल आया। जनता प्रसन्न हो गई। यह वहां से आषाढ़ी पूर्णिमा को पण्ढरपुर पहुंचा। एकादशी को फलाहार के लिए बन में गया, सन्ध्या को वापस चला भीमापूर आ गई। इसने जल पर मृगचर्म बिछाया उस पर दोनों बैठ कर पार हो गये। मन्दिर में पहुंच कर इन्होंने कीर्तन किया। भगवान ने प्रत्यक्ष होकर इसका आलिंगन किया। अब तुम यहां तक आने का कष्ट मत करना। जहां तू रहेगा वर्ष भर में दो दिन रामदास तुकारामादि को लेकर मैं स्वयं आजाया करूंगा। स्त्री ने वहां ही प्राण त्याग कर दिया कुछ दिन बाद वह भी परम पद को गया।

सुव्रत—यह स्मरण प्रेमी था। द्विज बालक था। इसके माता पिता का नाम सुमना, सोम शर्मा था। यह नैष्टिक ब्रह्मचारी था। प्राणायामी भी था। एकदा इसने प्रेम से स्मरण किया भगवान उसके सामने आ गये। इसने उनको बारम्बार प्रणाम करके प्रार्थनास्तवन किया। उन्होंने प्रसन्न हो कर परवार सहित इसको वैकुण्ठ भेजा।

शंख—यह स्मरण भक्त था। यह हैहय वंशीय क्षत्रिय श्रुत का पुत्र था। यह उदार, धीर, वीर, भगवत्प्रेमी था। दृश्य को मिथ्या और ब्रह्म को सत्य मानता था। इसको स्वप्न में आज्ञा हुई कि तुम स्वामी पुष्करणी में निवास करो। मेरा दर्शन तुम को हो वेगा। पुत्र को राज्य दे कर यह वहां गया। इसके समीप अगस्त्य जी भी पहुंच गये। श्री हरि ने इसको प्रत्यक्ष दर्शन दे कर कृतार्थ किया। उन्होंने वहां ही निवास करके सुवर्ण मुखरी नदी को प्रगट करी।

बालगराम—यह स्मरण साधन में तत्पर था। यह सिद्ध भक्त था। इसकी प्रशंसा सुन कर सन्ध्या के समय जमींदार की पुत्र वधू इसके समीप गई। फल भेंट करके खड़ी हो गई। पूछने से आगमन का हेतु भी इससे कहा। यह बोला—तू अभी घर को चली जा यहां मत ठहर। श्री हरि का स्मरण करना तेरा मनोरथ पूर्ण होवेगा। आपत्ति आने पर सीताराम का स्मरण करना। यह वापस चली रास्ते में डाकुओं ने घेरली। उसने सीतारामजी का स्मरण किया, एक मनोहर बालक को लेकर भक्त आया, उन्होंने उसको उनसे बचाई। बालकके स्वरूप से मुग्ध होकर इसने उसका स्मरण किया। घर को पहुँची, उसके पुत्र हो गया समय पर। भक्त को भगवान के प्रत्यक्ष दर्शन अवध में हुए थे। यह ब्रह्मरन्ध्र भेदन करके दिव्य देह से वैकुण्ठ को गया॥

पत्र १०

त्रिलोचन--यह स्मरण प्रेमी भक्त था, यह गृहस्थ वैश्य था, धनी होकर साधु सेवी था, हरि मन्त्र का जाप करता था। एकदा इसने इच्छा की कि एक सेवक शरीर रक्षा के लिए चाहिये। भगवान ने उसकी इच्छा पूरी करने के लिए सेवक का रूप लिया। भक्त को प्रणाम करके उसने कहा--सेठ! मैं सेवक हूँ, मैं सेवा करने में कुशल हूँ, मेरा नाम अन्तस्थाई है, वेतन मेरा भोजन मात्र है, क्योंकि मैं दो तुला वजन का भोजन करता हूँ और वह भी आपकी स्त्री के हाथ का बना होवे अन्य के हाथ का नहीं। धनी ने स्त्री से कहा उसने स्वीकार किया। अन्तस्थाई ठहर गया। सेठ की और साधुओं की सेवा उनके मनके अनुसार करे जिससे वे राजी हो गये। स्त्री सेवक की सेवक बनी। उसको इसका भोजन बनाने में सारा दिन समाप्त हो जावे। उसकी स्वतन्त्रता में फरक पड़ गया अतः वह दुर्बल हो गई। एकदा सखी ने उससे कहा बहन! तू दुर्बल कैसे हो गई। वह बोली--मेरे को रोग क्लेश आदि का तिल मात्र भी दुक्ख नहीं है। मैं चिन्ताग्रस्त रहती हूँ। वह यह कि मेरे यहां अन्तस्थाई नाम का सेवक है उसके भोजन बनाने में दिन पूर्ण जाता है। उस दुक्ख से दुक्खित हूँ। वह न जाने कहां से आया, क्यों ठहरा है इसका पता मेरे को नहीं। सेठ का उतना प्रेमी भी नहीं है। अन्तस्थाई अदृश्य हो गया। पूछ ताछ होने पर भी उसका पता न चला। उस दिन उसके यहां साधु भी बहुत आगये। उनके प्रबन्ध करने में वह दुखी हो कर भूखा ही सो गया। भगवान ने उसको स्वप्न दिया। तू सेवक का फिकर न कर वह मैं ही था। अब मैं तेरे यहां अदृश्य हो कर रहूँगा और साधु सेवा करूंगा। आज से तेरे यहां जिस पदार्थ से पात्र भरा है वह कभी खाली नहीं होवेगा। उनमें से पदार्थ चाहे जितना निरन्तर खर्च करते रहो। साधुओं को इच्छा भोजन देते

रहना। जितने साधु होवें उनको भोजन कराने के पश्चात् तुम दोनों भोजन करना। भक्त ने स्वप्न की बात स्त्री से कही। वह भी राजी हो गई। उन्होंने वैसा ही किया। जिससे वे दोनों वैकुण्ठ को गये।

केदारनाथ—यह स्मरण भक्त था। यह अन्धा था। इसके ग्राम से यात्रियों का संग श्री बद्रीनाथजी की यात्रा करने को चला। यह भी उनके साथ हो गया। रास्ते में इसको चलने से तकलीफ पहुँची। भगवान बद्रीनाथजी किसी व्यक्ति का रूप लेकर आये। उन्होंने इसकी लकड़ी पकड़ली। वह चल पड़ा। प्रहर भर में पुरी में पहुँच गया। वह भगवान की दया से सूझता भी हो गया। उसने स्नान करके भ० बद्रीनाथजी का दर्शन, स्तवन किया। उन्होंने राजी हो कर उसको प्रत्यक्ष दर्शन दे कर कृतार्थ किया। जब यात्री पहुंचे तब उन्होंने कहा तू यहां कैसे आगया। उसने सब कहा वे भी राजी हो गये॥

पत्र ११

कृष्णदास—यह स्मरण भक्त था। सिद्ध महात्मा था। यह श्रीकृष्णजी का अनन्य प्रेमी था। उसे जो पदार्थ मिलता उसको श्रीकृष्ण के समर्पण करके फिर यह काम में लेता था। एकदा यह दिल्ली गया। एक दुकान पर इसने शुभ्र कुण्डलिका देखी। उसको खरीद करके वहां ही बैठ इसने भ० श्रीकृष्ण को भोग लगाया। भगवान मथुरा से दिल्ली पहुँच कर उसका प्रदान किया भोग पाने लगे। इतने में मथुरा के मन्दिर में राजभोग लगा। भगवान कुण्डली लेकर वापस आ गये और थाल में रखकर सामग्री आरोगने लगे। भोग का समय पूर्ण होते ही पण्डों ने मन्दिर खोल दिया। पश्चात थाल को देखा। उसमें जलेबी के टुकड़े पड़े पाये। यह कहां से आये इनका भोग तो हमने लगाया ही नहीं था। पूजकों ने इस बात को जानने के लिए अनशन लिया। रात्रि में

स्वप्न आया। उसमें भगवान ने आज्ञा करी। मेरा भक्त कृष्ण दास देहली को गया है। उसने जलेबी का भोग लगाया तुम्हारे भोग की शीघ्रता से मैं जलेबी उठा लाया कुछ खाई कुछ रह गई। उसके टुकड़े हैं। पण्डों की चिन्ता दूर हो गई। जब कृष्णदास वापस मथुरा पहुँचा तब सब बातें स्पष्ट हो गई। जनता ने इसका सन्मान किया। यह वल्लभाचार्य का शिष्य था।

यह मथुरा का रहने वाला था। एकदा यह दिल्ली गया। इसने एक वेश्या को नृत्य करते देखी। इसने उससे कहा अरी! तू मथुरा को चलेगी। वहां मेरा भगवान परम रसिक है। तू उनको रिझावेगी तो मनमाना पदार्थ उनसे तेरे को मिलेगा। उसने स्वीकार किया। फिर उसने मथुरेश, श्रीकृष्ण के सामने नृत्य गान किया। यह ऐसा नृत्य करती थी जिसमें स्वयं और श्रोता मुग्ध हो जाते थे। आयु पूर्ण होने पर वह भगवान के विग्रह में लीन हो गई। देखने वाले विस्मित हो गये। कहते हैं इसने कुए में गिर कर प्राण त्याग किया।

एकदा इसके यहां सूरदासजी पहुँच गये। इसने उनका अभिनन्दन किया। पश्चात् आगमन का हेतु उनसे पूछा। वे प्रसन्नता से बोले—मेरे बनाये पद द्वारा जितना प्रेम प्रभु का मेरे पर है। उन्हीं को तुम गाते हैं। फिर मेरे से अधिक प्रेम उनका तुम्हारे पर कैसा। जिससे तुम अत्यन्त प्रेमी श्री कृष्णजी के हो वह पद मेरे को सुनाओ। इसने कहा अच्छी बात है कल सुनाऊंगा। सूर ठहर गये। इसने अनशन करके श्री कृष्ण मन्त्र का स्मरण किया। रात्रि में भक्त भयहारी ने एक पद बनाकर उसके बिस्तरों पर डाल दिया। इसने उठते ही अनुपम काव्य को देखा उनकी कृपा का लवलेश माना। उसको याद कर के गाथा। सूर ने कहा तात! तेरे पर नटवर की पूर्ण कृपा है। यह स्वयं

प्रभु का बनाया हुआ है। सूर विदा हो गये। यह मथुरा की जनता का प्यारा बन गया।

एकदा यह समीप के कूप पर जल लेने गया। मूर्छा आजाने से यह उसमें गिर पड़ा। भगवान किसी वैष्णव का रूप लेकर आये। उन्होंने कूप में उतर कर इसको गोद में ले लिया। इसने कहा भगवान मैंने आपको पहचान लिये। आप इतना परिश्रम न करें। आपके धाम को मुझे पहुँचा देवे उन्होंने वैसा ही किया। इसका शव कूप में रह गया। उसको जनता ने देखा। परस्पर उन के परामर्श हुआ। कहां इसकी भक्ति कहां इसका दुष्ट मरण। जनता ने इसके गुरु को कहा। वह रोने लगा। हाय हाय वह मर गया और मेरे को भी मार गया। अत्यन्त परिश्रम से सञ्चित किया धन उसके सुपुर्द था उसका उसने न जाने क्या किया। जनता बोली गुरुदेव! उसको तो तुम फिर रोये करना प्रथम शव को सम्हालो। गुरु ने जा कर उसके शव को निकलवाया। उसका अग्नि संस्कार किया। वह धन को और जनता भक्त मरण को रोने लगे। भक्त का कलङ्क निवृत्त करना। इस इच्छा से भगवान ने गोपवेष धारण किया। गोवर्धन पर मथुरा निवासी गोप गौएं चरा रहे थे। वहां जा कर एक गोप से कहा। तात! तैंने मेरे भाई बलदेव को देखा था। उनके स्वरूप से मुग्ध हो कर वह तर्क वितर्क करने लगा इतने में कृष्णदास बलदेव के रूप में आया। वे चले गये। वह उनको देखकर डरा फिर भी देखने लगा। इसके देखते ही वे कृष्णदास हो गये। उसको देख कर वह राजी हो गया वह उसके चरण में प्रणाम करके खड़ा हो गया। कृष्ण दास बोला प्रिय तू मेरे को और मेरे गुरु को जानता है उत्तर में गोप ने कहा हां जी मैं सब को जानता हूँ। मैं कूप में गिर गया था। मैंने प्रभु का स्मरण किया। उन्होंने आकर मेरी रक्षा करी। उन्होंने मेरे को सेवा में रख लिया है। मैं उनकी सेवा करके सदा

सुखी रहता हूँ। मेरे पहले भगवान श्री कृष्णजी आये थे। उनको तैंने देखे होवेंगे। मैं उनके संग आया हूँ। तू मेरे कहने से गुरु से जा कर के कहना। मेरे को कृष्णदास मिला था। उसने कहा जहां मैं सोया करता था वहां पृथ्वी में आपका धन रक्खा है। जनता के सामने निकलवा लेना। ऐसा कह कर कृष्णदास चला गया। गोप ने प्रथम तो स्वप्न, भ्रम माना फिर निश्चय किया बात ठीक है। उसने सन्ध्या को जाकर मथुरा में सब बात कही। वे उसको लेकर गुरु के समीप पहुंचे। गुरु ने खुदवाया धन पूरा पा गया। गोप की बातें सत्य मानी। जनता का दुक्ख दूर हो गया। उन्होंने कृष्णदास को वैकुण्ठ में पहुँच गया सत्य माना। इत्यलम्।

रामहरिभट्टाचार्य—यह भगवान श्री कृष्ण का स्मरण प्रेमी भक्त था। हालपुकुर ग्राम का रहने वाला गृहस्थ द्विज था। यह यजमान वृत्ति वाला था। उस वृत्ति में जो कुछ मिल जाता उसमें निज का तथा साधु सेवा का निर्वाह करता था। एकदा यह अन्नादि पदार्थ लेने यजमानों के ग्राम को गया था। उन्होंने इसको द्रव्य अन्नादि पदार्थ दे कर विदा किया। यह सन्ध्या को पहर दिन रहते वापस घरको चला। रास्ते में वृष्टि हो जाने से घना अन्धेरा हो गया। यह एक वृक्ष के तले खड़ा हो गया। इसका मन व्याकुल हो गया था कि अब मेरा क्या होवेगा। इसने हरि स्मरण को नहीं छोड़ा। इतने में दो आदमी रोशनी ले कर चले आ रहे। इसने उनको आवाज लगाई वे आ गये। उन्होंने कहा तुम कौन हो कहां से आये कहां जाओगे। इसने कहा मेरा नाम रामहरि है। मैं ब्राह्मण हूँ। हरिपुर से आया गोविन्दपुर जाना था वृष्टि के होने से मैं यहां ठहर गया। मेरे को किसी नजीक के ग्राम को पहुंचा दो। मेरा जी व्याकुल हो रहा है। उन्होंने कहा यहां ग्राम नहीं हमारा घर है। वहां ठहर जाना। चलो, यह उनके घर को गया। एक

कमरे में यह ठहर गया। यह तो श्रीकृष्ण का स्मरण कर रहा है। उन्होंने विचार किया इसके पास बहुत धन है। निद्रा आजाने पर इसको मार डालो। इसने सुन लिया पर यह उनकी रोक कैसे कर सकता था। उसने सामने देखा एक वृक्ष खड़ा है। द्रव्य सहित वह उस पर चढ़ गया। कुछ देरके अनन्तर एकने आकर देखा वहां वह नहीं है खाली जगह पाकर वहां वह सो गया। दूसरे ने आकर उसका माथा काट लिया। फिर उसे देखा वह निज का आदमी मरा। वे दुखी हुए वह कहां चला गया। उनको ढूंढने पर भी वह न मिला। वे हताश हो कर सो गये। यह प्रभात होते ही भाग निकला। घर को पहुंच गया।

पत्र १२

नरहरि—यह स्मरण प्रेमी था। स्वामी रामानन्दजी का शिष्य था। 'महाभक्तो नरहरि विरक्ते विषये भवत्। ग्रामाद्वाह्ये कुटीं-वध्वा तस्थौचित्तेहरिस्मरन्, यह महाभक्त, विषयों में विरक्त, ग्राम के बाहर कुटी बांध कर रहता था। स्त्री पुत्रादि को सहायता पहुंचाता था कि उनसे साधु सेवा बनती रहे। एकदा घर को वैष्णव आगये। पुत्र ने स्वागत करके भोजन करने को कहा। उन्होंने स्वीकार किया। उसने घर में देखा इन्धन नहीं। उसने भाग कर नरहरि से कहा। वह वन में गया। वहां ग्राम देवी का स्थान था। वह लकड़ियों से बना था। उसने देवी से साञ्जली कहा अम्ब ! मेरे घर वैष्णव साधु भूखे बैठे हैं। इन्धन है नहीं। मैं लेने आया हूँ। आप दे दीजिए। ऐसा कह कर उसने मन्दिर में से काम पूर्ति काष्ठ निकाला। गट्ठा बांध कर वह घरको ले आया भोजन बना साधु तृप्त हो कर चले गये। रात्री को स्वप्न में उस को भगवती ने कहा। तात ! तेरे पर मैं बहुत प्रसन्न हूँ। अब तू मन्दिर के काष्ठ मत ले जाना। एक गट्ठा काष्ठ का नित्य तेरे घर पहुंच जाया करेगा। यह राजी हो गया। इसके पड़ोसी ने सुना मैं

भी वैसा ही करूं। उसने मन्दिर की लकड़ियों का गट्ठा बांध कर रखा। उसको शिर पीड़ा हो गई। वह हाय हाय मचाने लगा। स्वप्न में देवी ने कहा। तैंने मेरी लकड़ियें क्यों ली। तू तेरा भला चाहता हो वे तो एक गट्ठर लकड़ी का नित्य नरहरि के घर पहुँचा दिया कर। नहीं तो परवार सहित तेरे को मैं नष्ट कर दूंगी। उसने स्वीकार किया। उस दिन से वह गट्ठा पहुँचाने लगा। उसकी पीड़ा दूर हो गई। भक्त निर्धन नहीं रहा। इसके चरणामृत पीने से धनी वैष्णव का कष्ट दूर हो गया था।

विसोबा सर्राफ—यह स्मरण भक्त भगवान का था। यह ओढिया नागनाथ का रहने वाला था। यह यजुर्वेदी गृहस्थ था। यह धनी, दाता, दयालु था। इसका परिवार भी वैसा ही था। साधु सेवी था। यह साधु को देख कर कहता मेरे घर भगवान आ गये। एकदा काल पड़ा अन्न दो सेर का हो गया। जनता भूखे मरने लगी। इसने अन्न बांटना प्रारम्भ किया। भूखों को खिलाने में इसका सब वैभव खर्च हो गया। और तो क्या घर के भूखे मरने लगे। उन्होंने समझाया यह न माना। इसने एक व्यक्ति से करड़े सूद पर कर्जा निकाला। उसका अन्न ले कर भूखे को खिला पिला दिया। दुष्टों ने धनी को कहा अजी तुमने विसोबा को कर्जा क्यों दे दिया। जल्दी से वापस करालो। वह इससे बोला मेरे रुपये पूरे दे दो। इसने सातवें दिन दे देने को कहा। भगवान ने विसोबा के मुनीम का रूप लेकर उसके सूद सहित पूरे रुपैये दे कर रसीद लिखा ली फिर दूसरा रूप बदल करके इसको रसीद देकर वे अदृश्य हो गये। दुर्भिक्ष निकल गया। यह पण्ढरपुर में जा बसा। इसने सोपानदेव और ज्ञानेश्वर से गुरु दीक्षा ग्रहण करी। यह नामदेव का गुरु था। एकदा यह शिव लिंग पर पैर रख कर लेट गया। नामा से कहा फिर इसने। नामू! मेरे से पैर उठते नहीं तू उठा देना। उसने पैर उठा कर दूसरी ओर कर

दिये शिव लिंग उधर पैर के नीचे नजर आने लगा। इसने जनता को उपदेश दे कर कहा जहां भक्त वहां भगवान। वे प्राणी मात्र में व्याप्त हैं।

जनाबाई—यह स्मरण प्रेमी थी। नामदेव की नौकराणी थी। एकदा यह नामदेव के कपड़े धोने चली। रास्ते में वृद्धी स्त्री का रूप ले कर भगवान इसको मिल गये और इससे कहा मैं तेरे कपडे धो दूंगी। तू दूसरा काम कर ले। यह उसको वस्त्र देकर चली गई। बुढ़िया वस्त्र का गट्ठर ले कर भीमा के तट पर गई। जब तक वह न आई उसके पहले ही उसने कपडे धो, सुखा, घड़ी बना, गट्ठा बांध कर रख दिया। इसने वस्त्र सम्हाले वह अदृश्य हो गई। इसने नामा से कहा उसने उत्तर दिया पागल वे तो भगवान ही थे। जना चक्की चलाते समय भगवान का स्मरण करती। वे इसके संग चक्की चलाने लग जाते इत्यादि इसके काम भगवान करते रहते। भक्तवश भगवान की जय होवे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

पत्र १२

मुरारी—यह स्मरण सिद्ध था। यह विलन्द शहर का रहने वाला था। निःसंग, निर्लोभी था। पर्यटन शील था। राजा महाराजा से भी यह पूजाता था। एकदा यह स्नान करके घर को जा रहा था। एक चर्मकार भक्त तुलसी वृन्दावन के समीप बैठा हुआ शालग्राम भगवान का चरणामृत दे रहा था। इसने हाथ पसारा। वह बोला आप क्षमा करें मैं चर्मकार हूँ। इसने कहा चरणामृत सदा ग्राह्य है। तू डरे मत दे दे। उसने दे दिया यह पी गया। वहां की जनता इससे बिगड़ गई। इसको पतित, त्याज्य कर दिया राजा ने सुना उसने जांच की बात सत्य निकली। वह भी इससे नाति प्रसन्न हो गया। उसने भी इससे घृणा करी। मुरारी ने

ग्राम त्याग दिया। दूसरे स्थल पर बैठ कर हरि स्मरण करने लगा। राम जन्म का दिन समीप आगया। उत्सव किसी प्रकार मनाया जाय। इसके शिष्य राजा के राम नवमी का उत्सव प्रति वर्ष होता रहता था। उत्सव के चार दिन प्रथम भगवान ने उसको स्वप्न दिया। तुम मुरारी के बिना उत्सव मत करना नहीं तो तुम्हारा कल्याण नहीं होवेगा। राजा ने प्रात होते ही स्वप्न की बात राजकर्मचारियों से कही। उन्होंने कहा मुरारी को लाना चाहिये। स्वयं राजा गया। प्रणाम करके उसने आने का हेतु प्रगट किया। इसने कहा मैं हरि विमुखों को देखना नहीं चाहता। वह बोला—गुरो! आप मेरा इस प्रकार तिरस्कार करेंगे तो मेरे को वह प्रज्ञा कैसे मिलेगी जो गुरू द्वारा प्राप्त होती है। आप मुझ पशु को दण्ड द्वारा ही शुद्ध करें। मुरारी राजी होकर उसके साथ गया। राम महोत्सव में नृत्य करके इसने राम चरित्र कहा। राम विरह में दशरथ ने प्राण छोड़ा। इतना कह कर यह मूर्छित हो गया। और इसने प्राण त्याग कर दिया। जनता विस्मित हो गई। इसके शव को उठाने लगे न उठा। क्या किया जाय इतने में शव से अग्नि प्रगट हो कर उसने शव को भस्म कर दिया। जनता ने इसकी प्रशंशा निज के किये कर्मो का पश्चाताप किया। भस्म प्रयाग राज को पहुँचाई।

पत्र १४

पन्नालाल—यह भगवान का स्मरण भक्त था। यह सीसवाली ग्राम का निवासी गौतम गौड़ द्विज था। इसको व्रज में व्रजराज की प्रेरणा हुई। जिससे इसको देह गेहादि से वैराग्य हो गया। इसने फिर बड़ोद ग्राम के समीप काली सिन्ध के किनारे एक विशाल शिवजी का मन्दिर है जिसको जहांगीरपुर निवासी दाधीच कुल भूषण जाजूरामजी शर्मा ने निर्माण कराया था। उसमें निवास किया। यह अहोरात्र श्री वृन्दावन विहारीजी का चरण चञ्चरीक

होकर रहा। जिससे इसको इन्होंने अपना लिया। यह वाणी सिद्ध था। जो कह देता वह सत्य हो रहता। निज मृत्यु के प्रथम जनता को कल चैत्र शुक्ला तृतीया की रात्रि के ब्रह्म मुहुर्त में शरीर छूटे गा। वैसा ही हुआ। सम्वत २००८ वि० उक्त तिथी को देहत्याग करके परम पद का अतिथी हो गया। यह यशस्वी भी था। इसका जन्म समय सम्वत् १९४६ का कहते हैं।

पत्र १५

वाल्मीकि—ये भगवन्नाम के स्मरण प्रेमी ब्राह्मण थे। वरुण नामक सूर्य की स्त्री चर्षणी से भृगु ने अवतार लिया उसका नाम वल्मीक था उससे ये उत्पन्न हुये थे। उक्तश्च—'चर्षणी वरुणस्या सीद्यस्यांजातो भृगुः पुनः। वाल्मीकिश्चमहायोगी वल्मीका दभवत्किल, ६।१८।४-५ भा०, ये महायोगी और आदि कवि कहे जाते हैं। इन्होंने भ० श्री रामचन्द्रजी के ललित चरित्रों का वर्णन किया था। इनका प्रधान आदि काव्य वाल्मीकि रामायण है। 'कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकि कोकिलम्॥

शरभंग—यह स्मरण द्वारा भ० श्री राम को प्रसन्न करके वैकुण्ठ को गया। यह महान सिद्ध था।

सुतीक्ष्ण—यह स्मरण प्रेमी महर्षि था। दण्ड कारण्य निवासी था। श्रीराम भगवान् ने इसको दर्शन दे कर कृतार्थ किया।

पत्र १६

अत्रि—ये भगवान के स्मरण प्रेमी भक्त थे। दण्ड कारण्य निवासी थे। इनकी स्त्री का नाम अनसूया था। यह महा भाग्यवती थी। इसके गर्भ से प्रधान तीन देवों ने अवतार लिया था। उनका इतिहास निम्न है। तीन प्रधान देवियों को इस बात का मद हो गया कि जगत्रय में हमारे सदृश कोई भी स्त्री पतिव्रता नहीं।

मदहारी भगवानको सहन न हुआ। उनकी प्रेरणाके वश देवर्षि नारद हो गये। इन्होंने लक्ष्मीजी के सामने अनसूयाजी को प्रशंसा करी। साथ में यह भी कह दिया कि मेरे को उसके समान पतिव्रता दूसरी कोई भी नजर आती ही नहीं। इस बात से नाराज हो कर लक्ष्मीजी ने नारद से कहा, नारद तेरे को धिक। जो तू तुच्छ मनुष्य की स्त्री की बड़ाई करता है। वह ही पतिव्रता है। क्या मैं नहीं हूँ। नारद बोले—मात! आप अपने मन से भले ही बनी रहो तुम को पतिव्रता कोई भी कहता होय तो कहो और अनसूया की बड़ाई प्राणि मात्र करते हैं। इससे वह नाराज हो गई और चरण सेवा को छोड़ कर नारद को मारने दौड़ी। वह वहां से भाग निकले। ये फिर ब्रह्मलोक में गये माता पिता को प्रणाम करके माता के सामने अनसूयाजी की बड़ाई करी। सावित्री नाराज हो कर मारने दौड़ी। वह वहां से भाग कर कैलाश पर पहुंचे। वहां भी उन्होंने बड़ाई अनसूयाजी की करी। पार्वतीजी भी नाराज हो गई। तूंबड़्या नारद, ऐसी वैसी बातें बहुत किया करता है। आज इसे मजा चखाना है। ऐसा कह कर मारने दौड़ी। वह भाग गये। नारद के गये पीछे लक्ष्मीजी भगवान से बोली। प्रभो! आपके सामने नारद मन माना बोल गया। आपने क्या नहीं सुना होवेगा। आपने उसको कुछ भी नहीं कहा। पति के सामने स्त्री को काई भी कुछ कहदे और पति सुनता रहे तो समझना चाहिये वह नपुंसक, कायर है। आपसे मेरा यह कहना है कि अनसूया का सतीत्व नष्ट कर के तूंबड़्या को दिखावे फिर उसे आप पीटें। नहीं तो मैं प्राण खो दूंगी। श्री हरि बोले—मरे मत मैं जाता हूँ। वे अनसूया के घर चले। उनको आगे शिवजी और ब्रह्माजी भी मिले। वे भी स्त्रियों के कहने से वहां ही जा रहे थे। उन तीनों के परस्पर परामर्श हुआ। सबने अभिप्राय प्रगट किया। उनका काम एक ही था। अतः वे ब्राह्मण बनकर अनसूया

के सामने वचन भिक्षा के अतिथि बने। वह इनको और इनके अभिप्राय को पहचान गई। उसने तीनों को पांच, छः मास के छोटे बालक बना लिये। स्तन में दूध को उत्पन्न करके उनको पिलाया उनको फिर पलणे में पोढ़ाकर उनको झूला देने लगी। स्नान करके अत्रि आये। उनसे भी उसने कह दिया। बारह वर्ष हो गये वे उतने ही बडे बालक बने रहे। एकदा इनके समाचार पाने के लिए नारद को देवियों ने याद किये। वे प्रथम वैकुण्ठ में पहुंचे। माता को प्रणाम करके बोले। माता आपने मेरे को कैसे याद किया। वह बोली—भगवान कहां है। नारद ने कहा—भगवान अनसूया का सतीत्व नष्ट करने गये थे। वे बालक बने उसी की गोद में खेल रहे हैं। आप स्वयं जा कर उन्हें छुड़ा कर लाओ नहीं तो तुम उनसे हाथ धो बैठोगी। इस प्रकार उन्होंने सावित्री, पार्वती को भी कहा। वे तीनों ही चली। ब्राह्मणी के रूप में इनको देख कर अनसूया अति प्रसन्न हुई। प्रथम पुत्र आये अब पुत्र वधू भी आ गई। उसने इनकी पूजा करके घर में पलणे के समीप इनको बैठा दी। देवों को उस अवस्था में देख कर ये लज्जित हो गई। इन्होंने अनसूया के चरण पकड़ कर कहा हमारे पति हमारे को दे देवें। उसने तीनों को पूर्ववत् बना दिये। देवों ने कहा धन्य है मात तेरे को। तेरी जैसी प्रशंसा सुनी वैसी ही आप हैं। हम इतने दिन कृत्रिम पुत्र हो कर आपके समीप रहे अब हम तीनों आपके सपोदर पुत्र हो कर रहेंगे। ऐसा कह कर वे चले गये। पश्चात् उन्होंने अवतार लिया। भगवान से दत्त, ब्रह्मा से सोम, शिव से दुर्वासा उत्पन्न हुये।

पत्र १७

इन्द्रद्युम्न—यह स्मरणावलम्बी था। यह राजा था। एकदा यह ध्यानस्थित था। इसके समीप अगस्त्य गये। उन्होंने इसे कहा मैं भूखा हूँ मेरे योग्य खाद्य पदार्थ मेरे को प्रदान कर। वह ध्यान-

स्थित भगवान के दर्शनों में मुग्ध था। उनका न सुना। उन्होंने कहा मेरे को देख कर कल्पित समाधि लगा ली उन्मत्त हाथी के सम वैठा हुआ अतः यह हाथी हो जायगा। वे चले गये। यह दूसरे भव में जातिस्मर हाथी हुआ। वह परमात्मा को स्मरण करता रहता भूलता नहीं।

. गजेन्द्र—इसको पूर्व जन्म की स्मृति थी। इसको सौ स्त्री थी थी वाल वच्चे वहु परवारी था। पर इसका चित्त सदा श्री हरि के चरणों का भ्रमर हो कर रहता था। एकदा ज्येष्ठ मास की गर्मी से यह विकल हो गया। यह जलपान करने क्षीर सागर के तट पर पहुंचा। इसने जल पी कर स्नान किया जिससे इसको शान्ति मिली। परिवार सहित यह जल विहार करने लगा। उस अवसर में मकर ने इसका पैर पकड़ा। यह चिल्लाया। परिवार के छोटे बडे भाग निकले। इसने निज को आपत्ति में फंसा देख कर विचार किया मेरा मोह निरर्थक रहा। क्योंकि जिनको मैंने प्रेम से पाले उनमें से मेरा सहायक एक न वना। मगर ने मेरा पैर पकड़ा मेरे मुख से सुनकर भाग गये वे नेत्रों से देख लेते तो न जाने कितनी दूर भाग जाते। अस्तु। संसार में कोई किसी का नहीं। जिसकी आपत्ति उसका वही भोक्ता है। जीव कर्म वश है। स्वतन्त्र नहीं। जीव की जिस प्रकार सत्ता है उसकी डोर भगवान के हाथ में है। वे कृपा करें तो उसकी सत्ता उसको प्राप्त होजाती है। अतः परचार मेरा निःसत्व हैं। सत्तावान केवल नारायण ही हैं। उनके स्मरण से आपत्ति निमूल हो जाती है।` इस प्रकार दृढ़ निश्चय करके उसने श्री हरि का शरण ग्रहण किया। जो आसक्ति को त्याग करके वन में रहते हैं उनको मंगलप्रद पद वे ही देते हैं। जिनके जन्म, कर्म, रूप, गुण, दोष आदि कुछ नहीं है वे ही भक्तों की रक्षा के लिए धारण करते हैं। ममत्वी से अत्यन्त दूर तथा विमुक्त संगी के हृदय में निवास करते हैं।

मेरे सदृश पशु को फांसी तोड़ने वाले करुणालय, ब्रह्माण्डोदर भाजन हैं। पदार्थ प्राप्ति के लिए सच्चे सन्त सेवा नहीं करते केवल उनके चरणों की प्रीति को चाहते हैं। वे किसी के न हो कर जीव मात्र के हितेच्छु हैं। उनके चरणों में मेरा चित्त बना रहे। प्रथम तो गजेन्द्र ने मकर से युद्ध किया। पश्चात् उससे परास्त हो कर वह गहरे जल में पहुंचा तिल बराबर सूण्ड रह गई। उसने प्रभु को पुकारे 'नारायणाखिलगुरोभगवन्नमस्ते' श्री हरि ने पैदल दौड़ कर मकर से भक्त को बचाया। ग्राह क तन्तु चक्र से छेदन किये इसको पार्षद बनाया। वे अदृश्य हो गये।

पत्र १८

अगस्त्य–यह भगवान श्री राम के स्मरण प्रेमी भक्त थे। ये मित्रावरुण से उत्पन्न है अतः इनका दूसरा नाम कुम्भ योनि है। समर्थ सिद्ध थे। इन्होंने विन्ध्याचल की गति को कुण्ठित कर दी थी। इन्होंने समुद्र का शोषण कर दिया था। पञ्चवटी के ब्राह्मणों की रक्षा के लिये इल्वलवातापी के यहां पहुंचे। उन्होंने इनका स्वागत किया। भोजन के लिये एक खाद्य पदार्थ बनगया दूसरे ने इनको भोजन कराया। पश्चात् उसने मृत सञ्जीविनी विद्या का मंत्र पढ़कर भ्राता को पुकारा वह इनके पेट में सजीवन हो गया और इनका उदर चीरने लगा। इन्होंने पेट पर हाथ फेर कहा भस्म भव वह भीतर ही भस्म हो गया। इन्होंने कहा दूसरे से अब जल पिला। उसने कहा सरोवर भरा पी लीजिये। दूसरा जल हो कर जल में मिल गया। उसने पेट में दर्द उठा दिया। इन्होंने हाथ फेरा वह भी भस्म हो गया। इन्होंने पञ्चवटी के द्विजों का दुक्ख दूर किया। इन्होंने अभेद्य शस्त्र देकर भ० श्रीराम के कार्य में सहायता की। कहते हैं कि पञ्चवटी में पर्णकुटी निर्माण कर के भ० श्रीराम रहने लगे। यह मारीच ने सुना। वह माता, भ्राता का बदला लेने की इच्छा से मृग का रूप लेकर पर्णकुटी के पास

गया। इस पर सीताजी की दृष्टि गई। इसके स्वरूप को देखकर वह मुग्ध हो गई। उसने भगवान से कहा। प्राणप्रियनाथ! नेक उधर देखिये सुन्दर सुवर्ण रजतमय जीता हिरण। आप इसको जीता ही पकड़ दीजिये। मैं इसे पालूंगी। मैं सासूजी की भेंट में इसे दूंगी। मृग ने सुना वह हुसियार हो गया। भगवान श्री राम लक्ष्मण से बोले इसको जीता पकड़ने के लिए जानकीजी कहती है। चलिये हम दोनों इसको पकड़ लेवे। सीताजी की रक्षा केवल अगस्त्यजी करेंगे। उन्होंने मधुरिका ऋषि कन्या को भेज भी दी है। वह रहेगी। ऐसा विचार करके दोनों भ्राता उसको पकड़ने गये। सीताजी ने ऋषि कन्या से कहा सखी! भगवान हिरण को पकड़ कर के लावेंगे। उनके स्वागत में उनको पुष्पमाला धारण करावेंगी। चलें हम दोनों उनके न आने के प्रथम ही पुष्पों का सञ्चय कर के ले आवें दोनों ने वन को प्रस्थान किया। एक पुष्पित वन नजर आया। सीताजी ने कहा इस वन में चलो। वह बोली। यह वन ऋषियों का तप स्थान और अपरिचित है। इसके पुष्प विचार के लेना चाहिये। अधिक दूर भी न जाना चाहिये। अच्छा सखी—सामने देखो सुन्दर खिले फूल हैं। देख इधर भी मनोहर सुगन्धित फूल खिले हैं। इनको लेने जा रही हूँ। तुम उधर मत जाओ वह अपरिचित प्रदेश है। उसमें शापानुग्रहकर्ता तपस्वी रहते हैं। पुष्प सञ्चय हो गया वह काफी है। भगवान श्रीराम के आने का समय भी हो गया है। सखी—वन, लता, पुष्प, फल, नदी, वृक्ष समस्त जीवों के उपयोगी हैं। फिर कोई क्यों क्रोध करेगा। सामने के खिले पुष्पों को लेकर चलें। ऋषि कन्या ने विरही भ्रमर को भ्रमरी से मिला कर सीताजी को बुलाती है। आओ देखो सीताजी। वह बोली नहीं। इसने जोरों से पुकारी वह न बोली। इतने में एक सुन्दर हरिणी आकर इस के समीप खड़ी हो गई। वह जानकीजी के विरह में व्याकुल हुई

उससे बोल न सकी। वह वहां से चली गइ। कुमारिका रोने लगी। वह न जाने कहां गई भगवान श्री राम वन से पधारेंगे उनको मैं क्या कहूँगी। सीता के न मिलने की बात कहूँगी तो उन की दशा कैसी होवेगी। मैं न तो उसको देखती हूँ न तपस्वी को। जाकर भगवान श्रीराम को कहना चाहिये। वह भागकर आगे बढ़ी तो उसने श्रीरामजी को और लक्ष्मणजी को आते देखे। श्रीराम कनक मृग को बगल में दबाये भ्राता से बातें करते हुए आ रहे हैं उनको देख खड़ी हो गई। आशीर्वाद दिया फिर उसने कहा देव! आपके लिए हम दोनों पुष्प लेने गई थी वहां वह खो गई। ढूंढने से भी न मिली। राम सुनकर हाहतोस्मि न मिली यह शब्द रूप अग्निकण उदर में पहुँच कर मेरे को जलाने लगे हैं। दैव की गति दुर्गम्य है किसी से जानी नहीं जाती। माता, पिता, भ्राता, राज्य, भवन को छोड़ कर घोर वन में आने पर भी जानकी का वियोगरूप महान असह्य दुक्ख। हा प्रिये कह कर पागल के समान रोने लगे। लक्ष्मण ने कनक मृग ऋषि कन्या को दे कर कहा तू पर्णकुटी पर ठहर हम उसको ढूंढने जाते हैं। उसने मृग को लिया पर वह उसके हाथ से भाग निकला। ये उसको देखने चले। बालु रेत में सीताजी के पाद चिन्ह नजर आये। आगे बढे एक हाथ का कङ्कण मिला। आगे हरिणी के पैर नजर आये। ये हताश हो कर अगस्त्यजी के आश्रम की ओर चले। इतने में महर्षि अगस्त्य सीताजी को लेकर आ रहे थे मिले। उन्होंने अगस्त्यजी को प्रणाम किया। जानकी ने रामजी को। उन्होंने उन को आशीर्वाद दिया। भगवान के इशारे से लक्ष्मणजी ने महर्षि से प्रश्न किया। आपको मेरी माताजी कैसे कहां प्राप्त हुई। महर्षिजी ने कहा सुनिये। महर्षि दुर्वासा इन्द्र के भय से सामने वाले वन में तप करने बैठे। यह वन उनका चेताया हुआ है। इन्द्र को उनका पता चला। उसने उनके तप को नष्ट करने

अप्सरागण को भेजा। उन्होंने वन में आकर खेल कूद करना प्रारम्भ किया। हरिणी नाम की अप्सरा उनकी कुटी के समीप आ कर पुष्प तोड़ने लगी। दुर्वासाजी ने कहा अरी मेरे देव के समर्पण करने योग्य पुष्पों को क्यों ले रही है। वह न मानी। उन्होंने क्रोध करके कहा मेरे वन में आज से किसी जाति की स्त्री आवेगी वह हरिणी हो जावेगी। दूसरी उसको लेकर मेरे समी॰ आई। मैंने दुर्वा की मुष्टि मन्त्र कर उसके सामने रक्खी। उसके खाते ही हरिणी पुनः अप्सरा हो गई। इसी प्रकार सीताजी हरिणी हो गई। यह मेरे आश्रम पर आई मैंने योग बल से पहचान ली। मैंने इसके वस्त्र, अलङ्कार मंगवाये। दुर्वा मुष्टि मन्त्र करके दी इसने खाली। यह पुनः जानकी हो गई। वस्त्रालङ्कार धारण कर इसने मेरे से कहा आप मेरे को स्थान पर पहुंचादे। देव मेरे बिना व्याकुल हो रहे होवेंगे। एक मेरा कङ्कण भी जाने कहां रह गया है मैं उसे ढूढ़ूंगी। मैंने विचार किया यह उसमें जाकर फिर हरिणी हो जायगी अतः वनके श्राप को नष्ट कर देना चाहिये। मैंने दुर्वासा के श्राप को नष्ट कर दिया। अब वहां कोई भी जावे डर नहीं रहा। मैं इसको लेकर आया हूँ। सम्भालें। भगवान श्रीरामने, कङ्कण मिला था वह उसको दे दिया वे आनन्द से कुटी को आ गये।

पत्र १६

माधवदास—यह स्मरण भक्त था। यह उत्कल देश निवासी था। यह परिश्रमी, महाधनी, स्त्री पुत्रादि का दृढ़ अनुरागी था। इसका ममत्व वृद्धावस्था पर्यन्त बना रहा एकदा यह एकाकी, कार्य-वश नाति दूर ग्राम को गया। वहां से वापस हुआ। चलने के परिश्रम से थक कर यह वृक्ष की छाया में बैठ गया। अकस्मात इसको उदर पीड़ा हो गई। वह इतनी बढ़ी कि यह मूर्छित हो गया। एक मुहूर्त के बाद इस ी पीड़ा कम हो गई। पश्चात् यह इसी को

कहने लगा। मैं एकाकी हूँ जिनका मैंने पालन किया उनमें से यहां कौन था। यद्यपि मैं घर को भी होता तथापि वे मेरी उदर पीड़ाको नहीं बटा लेते। मेरा दुक्ख मेरेको ही भोगना पड़ता। यदि त्रिताप को मिटा देने की शक्ति स्त्री पुत्रादि में होवे तो उनकी सेवा ही जीव को श्रेयस्कर है। फिर भगवान से क्या प्रयोजन। जीव का दुक्ख दूर भगाने में प्रभू ही समर्थ है। स्त्री पुत्रादि नहीं। तत्ववेत्ता यह समझ कर उनकी शरण में जाते हैं। मैं घर वालों के सामने वे मेरे सामने दुखी रोगी नहीं हुये थे क्या। किसका किसका किसने बटा लिला। कालवश सुख दुक्खादि होते ही रहते हैं। मैं उनके स्नेह से बन्धा हुआ नहीं करने के काम को करता रहता हूँ। यह मेरा अज्ञान है। वृद्धावस्था दिन प्रति दिन मेरे को दबाती जा रही है। मन्दाग्नि होने से अल्प भोजी हो गया हूँ। फिर भी निकल जाने का समय है। शीघ्र ही श्री हरि के शरण में पहुँच जाना चाहिये। समच्च की पूर्ति होते ही यह घर को गया। इसने परिवारियों को बुलाकर कहा। आप मेरे प्यारे तथा आज्ञाकारी हैं। अतः तुम अपना घर सम्भालें। मैं अब श्री हरि का शरण ग्रहण करूंगा। यह ऐसा कह कर नीलाचल पर पहुँचा। एक गुफा में पद्मासन से बैठ कर इसने अनशन द्वारा भगवान जगन्नाथजी के चरणों में चित्त लगाया। तीन दिन हो गये।

भगवान प्रसन्न हो कर चौथे दिन की रात्रि को लक्ष्मीजी से बोले प्रिये कुटुम्ब स्नेह को त्याग कर के माधवदास नीलाचल की गुफा में बैठा है। उसको मेरा स्मरण करते और भूखे मरते चार दिन हो गये हैं। तुम सोड़ का लाडू उसको दे आओ। उसने लाडू माधव को देदिया। माधव ने लड्डु पालिया सुवर्ण थाल को शुद्धि करके रखदी। प्रभात में पण्डाने मन्दिर खोल कर देखा। सुवर्ण थाल सहित लड्डु गायब। उसने अन्य पूजा पहारियों से भी कहा। उन्होंने राजा से कहा। थाल चोरी में गया उस को ढूंढ कर लाओ

इसने दूतों और पण्डों से कहा। वे ढूंढने दौड़े। कितने ही नीलाचल की गुफा में पहुंचे। उन्होंने थाल सहित इसको देखा। उसको बांध कर लाये फिर मारा भी। इसको मार शोथ हो कर मूर्छा आ गई। उनमें से एक दयालु था। उसने इसको छुड़ाया। शिशिर ऋतु के दिन थे अतः भगवान को तपाने के लिये अंगीठी चेतन हुई। पण्डे देव को तपाने लगे। पीठ पर उनकी नजर गई। पृष्ठ जगह जगह से फट रही है और फूली हुई भी है। वे विस्मित हो गये। इस रहस्य को जानने के लिए उन्होंने अनशन व्रत धारण किया। स्वप्न में भगवान ने उनको कहा। अरे जिसको तुमने आज मारा है वह मेरा भक्त है। यह चोर नहीं है। उसके समीप लाडू थाल मैंने भेजा था। उसको मारा मैंने उसकी मार को पीठ से ग्रहण करी जिससे यह चिन्ह हो रहे हैं। वे सब जाग उठे। उन्होंने माधवदास को बन्धन से छोड़ दिया। उसको स्नान वस्त्र, अलङ्कार से विभूषित किया। भोजन कराया। उससे अपराध की क्षमा मांगी। उपचार किया। उसकी मार के क्षत श्रेष्ठ हो गये। भगवान का स्वास्थ्य भी ठीक हो गया। माधव ने पुरी में रह कर शान्ति से स्मरण किया।

एकदा यह रात्री पूजन के समय मन्दिर में गया। यह दर्शन प्रणाम कर के वहां ही ध्यानस्थित हो गया। पण्डों ने भगवान को शयन करा कर दर्वाजा बन्द कर दिया। इसका ध्यान खुला। यह बाहर जाना चाहता था पर करे क्या। रास्ता नहीं यह वहां ही सो गया। शीत के दिन थे इसको शीत सताने लगी। कांपने लगा। भगवान ने इसको रजाई ओढ़ा दी। यह आराम से सो गया। प्रभात होते ही पण्डों ने पट खोला। इसको देखते ही वे बिगड़े। कौन है यह उठ भगवान के वस्त्र को ओढ़ कर सो गया। इसने उठ कर सब कह दिया। पण्डों ने इसको प्रणाम करके कहा। आपके उपर भगवान की पूर्ण कृपा है।

एकदा यह समुद्र के तट पर पहुँचा। वहां इसको उदर शूल हो कर रेचन हो गया। उससे यह बेहोश हो गया। कुछ समय के पश्चात इसको सुध आई। इसने भगवान का स्मरण किया। वे साधु का रूप ले कर के आये। उन्होंने इसके मल मूत्र के स्थान तथा वस्त्र धोये। इसको भोजन कराया। यह सचेत हो कर बोला प्रभो मैं आपको पहचान गया। आप भगवान जगन्नाथजी हैं। आपने जो काम किया वह ठीक नहीं किया। वे बोले माधव! तू मेरा प्राण है। तू मरण तुल्य हो गया था। अतः मैंने तेरी शुद्धि करी। इसमें किस बात की घृणा है। शुद्धि तो सब को करनी पड़ती है। यह बोला आप मेरे को इस प्रकार का दुक्ख होने ही मत दो। वे बोले कर्म तन्तु अकाट्य है। पूर्व सञ्चित कर्म द्वारा अब तक तेरे का दुक्ख मिलने वाला था मिल गया! आगे किसी प्रकार का कष्ट तेरे को नहीं होवेगा। भगवान अदृश्य हो गये। यह डेरा पर गया।

एकदा इसने भिक्षा से निर्वाह करने का नियम लिया। यह पुरी के समीप के ग्राम में गया। एक महा क्रूरा के घर जाकर इसने भिक्षा मांगी। वह आंगण लीप रही थी। उसने उत्तर नहीं दिया। इसने दूसरी बार कहा। वह क्रोध में आकर मीठी मीठी गालियां सुनाने लगी। इसने सहर्ष बार २ कहा। उसने कहा यह ऐसे नहीं मानेगा। देख मेरा तमाशा। मैं क्या करती हूँ। ऐसा कह कर उसने लीपने का पोता इसके मुख पर दे मारा। यह भाग कर समुद्र तट पर गया। इसने पोता के वस्त्र को धो कर सुखाया। उसकी बत्तियां बना कर इसने भगवान जगन्नाथ जी की आर्ती करी और कहा उस माई की बुद्धि को निर्मल बना देने की दया करें। भगवान ने उसकी बुद्धि को शुद्ध करदी। उसे वीचार हुआ। मेंने काफी धन होने पर भी उसका दान, परोपकार, उपभोग आदि कुछ नहीं किया। बालक परवार भी नहीं जिस के लिये संग्रह करूं।

अवस्था मेरी वृद्ध हो गई । अब तो भगवन्नाम का स्मरण और साधु सेवा मेरे को करना है । वह उस दिन से साधु सेवा करने लगी । कुछ दिन के पश्चात यह भी उसके घर पहुंच गया । उसने सहर्ष इसका स्वागत किया । इससे गुरु दीक्षा भी ग्रहण करी । धन वस्त्रादि पदार्थों से इसकी सेवा करी । वह डेरा पर गया । वह परम पद को गई ।

एकदा माधव की इच्छा यात्रा करने की हुई । यह पुरी से काशी को गया । उस समय में एक दिग्विजयी शास्त्री भी जा पहुँचा। उसने घोषणा करी मेरे से यहां के पण्डित शास्त्रार्थ करें जो दल परास्त हो जावे उसको गर्दभ पर सवार करके काला मुख बनाकर उससे नगर फेरी करावें । पण्डितों ने कहा भगवन् विन्दु माधव जी के मन्दिर के पं० माधवदासजी ठहरे हैं वे जैसा कहेंगे वह हम को स्वीकार है । दिग्विजयी इनके समीप गया । प्रणाम करके उसने समस्त पण्डितों का आशय कहा । इसने पत्र में लिख दिया कि माधव का परास्त और दिग्विजयी का विजय हो गया । उसने वह पत्र पण्डितों को दिखाया । वे माधव के समीप गये । उन्होंने प्रण कह सुनाया । हम सब काले मुख के हो कर गधे पर बैठेंगे । यह आपको अच्छा लगेगा । यह डर गया इसने भगवान जगन्नाथ जी का चिन्तन किया । वे पण्डित का रूप बना कर आये । शास्त्रार्थ में उन्होंने उसको परास्त किया । उससे विजय पत्र लिया और उसको गधे पर बैठाया । इसने सुना कहा सद्विद्या प्रदाता गुरु का शिष्य हो कर वह नम्र नहीं बना तो विद्या निष्फल ही है । दिग्विजयी को इसने गधे से उतार लिया उसको स्नान वस्त्रादि से अलंकृत करके विदा किया । भगवान अदृश्य हो गये । पण्डितों को भगवान माधव के बड़े शिष्य स्वरूप में दीखे थे । अतः उसको बुलाकर उन्होंने पूछा क्योंजी तुमने दिग्विजयजी को कैसे परास्त किया । उसने उत्तर दिया मैं शास्त्रार्थ क्या जानूं । उन्होंने माधव को कृपासिन्धु भगवान का कृपा पात्र माना । भगवान सात वर्ष के

बालक का रूप लेकर माधव के समीप रहने लगे। सेवा का परस्पर सम्बन्ध होने से माधव के अतिरिक्त औरों को उनके दर्शन स्पर्श भाषण होने लगे। माधव मथुरा यात्रा को चले। सन्ध्या के समय किसी ग्राम के समीप वृक्ष के तले इसने डेरा लगाया। समीप में श्रद्धालु अति वृद्धा रहती थी। वह पथिकों को चणा प्रदान किया करती थी। इन सब को भी उसने चणा प्रदान किये। बालक को देख कर वह मुग्ध हो गई। इसके संग यह कैसे हो गया। यह उसको चुरा कर लाया होवेगा। उसकी माता की उसके विना कैसी दशा होती होवेगी। मन्द-भागिनी माता से वह पृथक हो गया। इस प्रकार वृद्धा को व्याकुल देखकर इसने प्रश्न किया मात! आप क्या सोच रही हो। साधुजी! मैं इस बालक की माता की दशा सोच रही हूँ। इसने सोचा मेरे साथ कोई बालक नहीं फिर यह क्या कहती है। अस्तु वृद्धावस्था में भ्रम हो जाया करता है। माधव ने भगवान जगन्नाथ जी का पूजन किया। पक्वान्न का भोग लगाया। उसमें चणा भी मिला दिये। बालक उठकर आसन पर बैठ गया भोग पदार्थ प्रेम से पाने लगा। जल पीकर अलग हो गया। बचा खुचा माधव ने पा लिया। वृद्धा राजी हो गई। प्रात होते ही आगे बढ़े। मध्यान्ह के समय सरोवर के तट पर पहुँचे। उन्होंने विश्राम किया। जब इन्होंने चलने की तैयारी करी तब एक वैश्य ने आकर इसकी प्रार्थना करी। स्वामीजी आप मेरे घर भोजन करके पधारें इसने स्वीकार किया। ये उसके घर को चले। वैश्य ने आगे जाकर प्रबन्ध किया। इतने में राजदूत आया वह उसको लेगया। स्त्री ने इनको प्रणाम करके सादर घर में बैठाये उसके घर में एक साधु प्रथम ही था। उसने क्रोधवश कहा एक स्थान में दो साधु नहीं रह सकते। स्त्री को इस बात से क्रोध आया वह उसे दबाकर इससे बोली साधो! आप भोजन बनावें भगवान को भोग लगाकर पावें। इसने कहा भद्रे! तू परिश्रम न कर हम भोजन नहीं करेंगे।

दूध दे दें। उसने सुन्दर दूध बनाकर दिया। उन्होंने भोग लगा कर पान कर लिया। उसको आशीर्वाद दे कर कहा भद्रे ! तू सत्पुत्रा, सौभाग्यवती, धर्मशीला होवेगी। वे यहां से चले। वैश्य त्वरया राज काज को करके घर को गया। स्त्री से बातें सुन कर भगा इसके चरणों में गिरकर गिड़ गिड़ाया प्रभो ! चलिये घरको इसने कहा अब नहीं आवेंगे तेरे पुत्र हो जायगा और हमारी मथुरा यात्रा समाप्त हो जायगी तेरे घर को भोजन करके जावेंगे। वह राजी हो कर चला गया। वे मथुरा पहुंचे। मथुरा को प्रणाम स्नान करके भगवान श्री कृष्ण के दर्शन किया। एक वैश्य ने इनको सत्तू प्रदान किया। उसको लेकर श्री यमुनाजी के किनारे गये हाथ प्रक्षालन करके उसका भगवान श्री कृष्ण को भोग लगाया। जगन्नाथजी पुरी को पधार गये थे। अतः श्रीकृष्णजी ने आकर सत्तू आरोगा कि राजभोग की पुकार मन्दिर में हुई सत्तू की मुठि भरकर भगवान मन्दिर में पहुंच गये थाल में रखकर वे पाने लगे। समय भोग का हो गया द्वार खुल गया। सत्तू को देखकर आश्चर्य में हो गये। प्रधान पण्डा ने अनशन करके वहां ही शयन किया। श्रीकृष्ण ने स्वप्न में उसको कहा मेरा प्राणप्रिय भक्त माधव नीलाचल से यात्रा करने आया है। उसने सत्तू का भोग लगाया उसका शेष रहा चूर्ण है। प्रात होतेही पण्डों ने माधव को लाकर मन्दिर में रक्खा। इसका काफी मान्य रहा। मथुरा की जनता ने इससे गुरु दीक्षा ग्रहण करी। एकदा माधव भाण्डीरवट को गया। वहां कदम्ब वृक्ष के तले सेभ नाम का सिद्ध भक्त बैठा था। उसने इसका सत्कार करके इसको बैठाया। इसकी दृष्टि एक पात्र की तरफ़ गई। इसने उससे पूछा आपके इस बन्द पात्र में क्या है। उसने कहा भोजन हैं। यह दिनको आजाता है बन्द करके रख देता हूँ। रात्री को भोजन करता हूँ। इसने कहा आप ऐसा न करें। ऐसा करने से भोजन में कृमि पड़ जाते हैं। प्रमाण में भोजन देख लेवें। उसने देखा उसमें कृमि नज़र आये। उसने

फिर वैसा नहीं किया। इसने ८४ वनोपवन की यात्रा करी। भ० श्री कृष्णजी की महिमा सुनी। यह वापस नीलाचलपुरी को विदा हुआ। रास्ते में उस वैश्य को आदेश दे कर कृतार्थ किया। यह पुरी को पहुंचा। भ० जगन्नाथजी के दर्शन इसने किये। जीवन को सफल बनाया। पश्चात परम धाम को गया।

पत्र २०

कृष्णदास—यह सिद्ध स्मरण भक्त था। यह अनन्तानन्द का शिष्य था। यह ऊर्ध्वरेता तपस्वी था। इसके शिष्य जितने थे वे सब सिद्ध थे। महाराजा मानसिंहजी भी इसी के शिष्य थे। इस की कृपा से महाराजा मानसिंहजी के सैनिक सवारों ने अश्वों द्वारा अगाध ब्रह्मनद को पार करके नरेशों से कर लाकर महाराज महाराज जयपुराधीश को दिया। इसका निवास गलता नामक उत्तम स्थान था। कहते हैं कि गलता विश्वामित्र के पुत्र गालव का प्राचीन स्थान था। किसी एक राजा के पुत्र नहीं था वह राज्य मन्त्री के आधीन करके राणी को लेकर वन में गया। श्री हरि के नाम मन्त्र का जाप करने लगा। कुछ दिन बीतने के अनन्तर यह वहां चला गया। राजा ने देखा साधु आ गया है। उसने राणी से कहा। एक साधु आ गया है उसके लिए तुम पक्वान्न भोजन बना कर ले आना। मैं आगे उसके समीप जा रहा हूँ। राणी ने भोजन बनाया। इसने साधु के समीप में जा कर प्रेम से प्रणाम किया। फिर बैठ कर वार्तालाप किया। राणी भोजन का थाल लेकर चली। विषम रास्ता होने से उसको ठोकर लगी। थाल टेढ़ा हो गया कुछ भोजन पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसको उसने पालिया। थाल उनके सामने रख दिया। राजा देखता था। अनुचित कर्म का दण्ड देने उसको मारने दौड़ा। इसने उसको मना किया। फिर थाल सामने लेकर भोजन के चार भाग किये। एक भाग निज का, एक राजा, का दो, भाग राणी का करके दे दिये। राजा ने प्रश्न किया राणी

को दो भाग कैसे। इसने उत्तर दिया एक इसका और एक इसके गर्भस्थ पुत्र का। तू घर चला जा। भोजन पाकर साधु विदा हो गया। ये घर को गये। राणी को धर्मात्मा वीर पुरुष हुआ। राजा राजी हो गया।

एकदा यह जयमल्ल राजा के नगर को चला गया। सरोवर के किनारे छायां में बैठ गया। एक पखाल वाला जल भरता था उस से इसने पूछा तू जल कहां ले जाता है। राजा के यहां। तू उसको कह देना एक भूखा साधु आया है। उसने आधा सेर दूध मंगवाया है। इसने राजा को कह दिया वह हंस कर बोला। साधु भ्रष्ट हो गये जो पदार्थ साधारण व्यक्ति से मांगा जाता है वह राजा से मांगने लगे। तू साधु को कह देना दूध पीना हो तो मेरे भैंसे का पीलो। उसने वैसा ही कहा। इसने भैंसे के माथे पर हाथ फेरा वह भैंस हो गई। स्तन से दूध की धार छूट गई। इसने कहा तेरे राजा से कहदे तू महल दूध से बनाले जल से मत बना। वह भैंस को लेकर गया राजा से कहा। राजा इसके चरणों में गिरा। अपराध की क्षमा मांगी। वह इसका शिष्य हो गया। इत्यलम्।

पत्र २१

कील्ह—यह श्रीराम का स्मरण भक्त था। यह कृष्णदास का शिष्य था। यह महायोगी, जितेन्द्रिय था। यह मथुरा में रहता था इसका दर्शन करने महाराज मानसिंह गया। दिन के ३ बजे की बात है। 'अहो सम्यगहो' कहा। राजा ने कहा आपने यह क्या कहा। महात्मा ने उत्तर दिया कि मरुदेव मेरे को प्रणाम करता हुआ स्वर्ग को जा रहा है मैंने उसको अच्छा हुआ कहा। मानसिंहजी ने तलाश कराई बात सत्य निकली। एकदा राजा बढ़िया पुष्पों की माला इसके लिए लाया। राणी भी साथ में थी।

इसको प्रणाम करके बैठ गये। इसने कहा राजेन्द्र! तुम माला लाये हो। मेरे को धारण करादो। राजा ने सन्दूक खोलकर देखी भुजंग नजर आया।। उसने सन्दूक बन्द करदी। राणी ने देखी माला नजर आई। दोनों के परस्पर झगड़ा हुआ। एक कहता है भुजंग है दूसरा कहता है माला है। राजा ने ज्ञाताज्ञात अपराध की क्षमा मांगी। इसने कहा अच्छा अब माला पहरादो। राजा ने देखी माला धरी है वह राजी हो गया। उसने इसको माला धारण करादी। एकदा राजा ने इसको साधु समाज में बैठे देखे। इसने योग द्वारा प्राण वायु को स्वस्थान से उठा कर ब्रह्मरन्ध्र द्वारा शरीर से पृथक कर दिया। सबको आश्चर्य सा हो गया। उन्होंने शव का संस्कार किया।

अग्रदास—यह श्रीराम का स्मरण प्रेमी सिद्ध भक्त था। यह कृष्णदासजी का शिष्य था। कील्ह का कनिष्ट गुरु भ्राता था। इसके दर्शन करने के लिए राजा मानसिंह पहुंचे। यह पुष्प वाटिका के सूखे पत्ते फेंक रहा था। राजा ने आसन पर बैठ गुरु अग्रदास को प्रणाम किया। इससे उसकी बातें होने लगी। सच्चा अग्रदास बगीची को साफ करके भवन में जाने लगा। राज कर्मचारियों ने रोक दिया। यह बाहर ही बैठ गया। इसका शिष्य नाभादास आया। उसने गुरु को पृथ्वी पर बैठे देख सेवकों को डांटे। तुम राज सेवक हो कर हमारे आश्रम में रोक टोक क्यों करते हो हट जाओ। वे हट गये। नाभा गुरु को लेकर भीतर गया। राजा से जो बात कर रहा था और वह उसी को दीखता था वह अदृश्य हो गया। सभासदों को आश्चर्य तो था ही कि राजा किससे बात कर रहा है पर वे चुप थे। सच्चे गुरु के आते ही सभास्थ व्यक्तियों ने उठ कर प्रणाम किया। राजा को चिन्ता हुई यह बात क्या है। जिससे बात करता था वह कहां गये। राजा ने नाभा से पूछा। उसने उत्तर दिया। तेरे से भगवान गुरु के रूप में बातें करते थे।

यह बगीचे से आये हैं। राजा सहर्ष गुरु सेवा करके घर को गया। यह अनेकों को पावन करके परम पद को प्राप्त हुआ।

उदगयनाचार्य—ये स्मरण भक्ति के आचार्य थे। काभक्तिः स्मरणाधिका, इनका सिद्धान्त। ये भ० विष्णुजी के अवतार थे। इन्होंने भक्ति का स्वरूप वेदों से उद्धृत किया था। ये मिथिला के निवासी सकल शास्त्र पारंगम थे। बौद्ध सिद्धान्त मुग्ध व्यक्तियों को सनातन धर्म का बोध करने को इन्होंने किरणावली नाम को ग्रन्थ बनाया था। एकदा बौद्धाचार्य मिथिलेश के यहां आया। उसने राजा से कहा तुम बौद्ध मत को ग्रहण करो। नहीं तो शास्त्रार्थ करो। जो परास्त हो जाये वह विजयी के मत का अवलम्बन का करे। कल प्रबन्ध हो जावेगा कह कर राजाने मण्डप तैयार कराया निज के पण्डितों को बुला कर अभिप्राय प्रगट किया शास्त्रार्थ होने लगा। पश्चात उसने सुवर्ण के थाल में शालिग्राम शिला रक्खी। सभासदों के देखते उसका उसने जल बना दिया। थाल में जल ही जल हो गया। उसने फिर उसको भी सुखा दिया थाल में कुछ भी न रहा। इन्होंने सनातन सिद्धान्त द्वारा थाल में जल उत्पन्न किया उसका फिर शालग्राम शिला बना दी। जनता धन्यवाद देने लगी। इन्होंने बौद्धाचार्य को कहा सामने देवद्वार का वृक्ष खड़ा है। उस पर चढ़ कर सीधा खड़ा पृथ्वी पर गिरे। वेद सत्य है उसका अनुभव हो जायगा। उसने स्वीकार किया। राजा ने इन्कार किया पर उन्होंने न माना। प्रथम इन्होंने वृक्ष पर चढ़ कर कहा वेद सत्य होवे तो मैं पृथ्वी पर सीधा ही गिरुं। ये गिरे वैसे ही पृथ्वी पर आ खडे हुए। उसने कहा वेद असत्य होवे तो मैं पृथ्वी पर सीधा ही गिरुं। वह गिरा, गिरते ही वह मर गया। उसके शिष्य भाग निकले। सनातन धर्म की विजय हो गई। ये भगवान जगन्नाथजी की यात्रा करने गये। बौद्धानुयायी पण्डों ने इनको मन्दिर में जाने न दिये। ये डेरा पर चले गये। स्वप्न

में प्रभु ने पण्डों से कहा आचार्य को मन्दिर में आने देओ। प्रात होते ही पण्डों ने इनको लाकर भगवान दर्शन कराये। इनके ऐसे अनेक चरित्र है।

पत्र २२

सुधन्वा—यह स्मरण भक्त था। चम्पापुरी नरेश हंसध्वज का पुत्र था। यह एक स्त्री व्रत धारी था। सत्यवक्ता, धीर, वीर, प्रिय, पितृ भक्त था। इसने महाराज युधिष्टिर का अश्वमेधीय श्याम कर्ण को पकड़ लिया। इसने पिताजी से कहा मैंने पाण्डवों के घोड़े को बन्धवा दिया है। इसकी रक्षा के लिए श्री कृष्णार्जुन होवेंगे। राजा ने कहा अच्छा किया। यह माता के समीप गया। इसने माता को प्रणाम करके कहा मैं हरि को ले आया हूँ। यह श्री कृष्ण की भक्त थी। उसने कहा बेटा! हरि कहां है। माताजी उसे बांध रक्खा है। क्या कहा हरि को भगवान द्वारकाधीश को यह तैंने ठीक नहीं किया। उन को छोड़ कर मेरे समीप ले आ। इसने कहा वे हरि नहीं पाण्डवों का घोड़ा है। माता बोली तैंने यह अच्छा नहीं किया। अर्जुन के अश्व को बांध कर तैंने मृत्यु को न्योता दे दिया। घोड़ा वापस कर दे। उसमें तेरा कल्याण है। मुझ मन्दभागिनी को प्रभु के दर्शन है कहां? इसने कहा अम्ब! मैं तेरा पुत्र हूँ। तेरे को प्रभु के दर्शन अवश्य कराउंगा। मैंने इसके लिए अश्व को पकड़ा है। माता बोली हां तैंने अच्छा किया। तू उनके सामने निडर हो कर युद्ध करना वे पतित पावन हैं। उनके सामने पापी निष्पाप हो जाता है। यह माना को प्रणाम करके बाहर आया। इसकी स्त्री प्रभावती मंगल सूचक दधि दूर्वा को लेकर इसके सामने आई। वह प्रणाम करके बोली। आप मुझ पतिव्रता को छोड़ कर व्यभिचारिणी का संग करने जा रहे हैं। फिर आपका एक नारी व्रत का पालन कैसे रहेगा। विवेकी कुल्टा को चाहते ही नहीं। यदि आप ने उसको अपनाली है तो आप

एक पुत्र तिलांजलि देने के लिए मेरे को प्रदान करते जावें। मैं सुस्नाता हूँ। इसने कहा प्रिये! तुम चिन्ता न करो पांच बाण में श्रीकृष्णार्जुन को परास्त करके वापस आये जाता हूँ। उसने कहा भगवान श्री कृष्ण के सन्मुख गये बाद वह उलट कर संसार सागर में गोता लगाने नहीं आता है। पुत्रवान, धर्मात्मा से वे अत्यन्त प्रसन्न रहते हैं। उपकार प्रियोविष्णु इस न्याय से अन्य की आशा को पूर्ण करने वाला उनके प्राण सम हो जाता है। यह बोला—तैंने राजा चण्ड के शासन को और युद्ध घोषणा को नहीं सुनी। उनके नियम विरुद्ध चलने वालों को तैल में उकाल दिये जावेंगे। यह समय ऋतुदान का भी नहीं। वह बोली—मैं अबला आपसे परास्त न हुई तो फिर उनको एक दिन में कैसे परास्त करेंगे। आपके सामने मेरी दुविधा न गई तो आपके पीछे सुविधा कहां। एकादशी का दिन, पितृव्या श्राद्ध, सोलहवां दिन ऋतु का होवे तो ऋतुदान देना ऐसा महर्षियों का कहना हैं। फिर आज का तो निर्दोष दिन है। उसने दोनों कोमल कर कमल गल में डालकर भवन में शैया पर इसको बैठाया। इसनें उसको ऋतु प्रदान किया। उसको वंशधारी गर्भ रहा। यह स्नान, वस्त्रालङ्कार शस्त्रास्त्र से सुसज्जित होकर जाने को तैयार हुआ।

राजा ने सुधन्वा का कहना शंखलिखित नाम के पुरोहितों से कहा। उन्होंने कहा आपको अर्जुन के युद्ध में आनन्द आवेगा। कल प्रहर दिन के चढ़ते युद्ध क्षेत्र में सैनिकों को एकत्रित होजाना चाहिये अन्यथा आज्ञा भंग के अपराध में अपराधी को तप्त तैल भून्ज दिया जावेगा। राजा ने वैसा ही किया। सब सैनिकरण में पहुँच गये। सेनापति ने राजा को कुशल कही। राजाने उससे प्रश्न किया। कोई रहा तो नहीं। उसने कहा और सब आ गये सुधन्वा नहीं आया। राजा ने कहा वह मेरी आज्ञा और तप्त तैल के कड़ाह को भूल गया। उसे शीघ्र बुलवाओ। दूत गये वह उनको

आता मिला। यह पिता के सामने प्रणाम करके बोला। मैं जिस कारण से देर में पहुंचा वह यह था। कह दिया। पिता ने कहा तू अविवेकी है। श्री कृष्ण की भक्ति बिना पुत्र वालों को मुक्ति मिल जाय तो श्वान, व्याघ्र, पापी आदि पुत्र वालों की मुक्ति हो जाना चाहिये। जो कुछ भी हो गया वह श्रेष्ठ है। इस बात से पुरोहित बिगड़ गये। जिसकी आज्ञा का गौरव नहीं उसके यहां रहकर प्राण गमाना है। वे नाराज हो कर चले। राजा ने सुना। उसने उनको बुलाकर कहा। आप नाराज न होवें। इसको तप्त तैल में डाल देवें। सेनापति ने प्रचण्ड दूतों से इसको पकड़वा कर तप्त तैल के स्थान पर भेज दिया। इसने कड़ाह देखा। विचार किया। 'स्मरणं वासुदेवस्य यावत्तेषां नरोचते। गमनागमनंतावद् हिनाभिहजायते। नमो द्योभक्तिहीनानां विष्णोरमित तेजसः। यस्यकृष्णे पराभक्तिमुक्तेरपि गरीयसि। विष्णोर्नामानियेमूढा नस्मरंतिविमोहिताः तेषामिहात्महंतृणां प्रायश्चितंनविद्महे।' बिना भक्ति के दुक्ख दूर नहीं होता। अतः उनके शरण को ग्रहण करना चाहिये। इसने नृसिंह भगवान का स्तवन किया। भगवन मेरा सङ्कल्प माता को मेरे को श्रीकृष्णजी के दर्शन करने का था। वह अन्यथा हो गया। क्योंकि मैं काम संतप्त स्त्री के वश में हो कर आपसे विमुख हो गया। मैं पतित हूँ। आप पतित पावन हैं। पतित को पवित्र बनाना आपका स्वभाव है। यथा—प्रह्लाद, ध्रुव, गजेन्द्र, द्रौपदी आदि को महान विपत्तियों से बचाये हैं। आपके शरण में आ जाने से मुक्ति में तो सन्देह नहीं पर व्यवहार में कलङ्कित रह जाउंगा कि भगवद्भक्त सुधन्वा की मृत्यु तप्त तैल से हुई। नृसिंह आपकु मृत्यु से बचाने की दया करें। इस प्रकार सुधन्वा प्रभु के चरणों में मुग्ध है। सेवकों ने इसको उठा कर कड़ाह में पटक दिया। कड़ाह खोलते गहरे तैल से पूर्ण था। इसके गिरते ही वह शीतल हो गया यह उसमें तैरने लगा। देखने

वालों को आश्चर्य हो गया। यह जादूगर है। इसने कड़ाह को बांध दिया है। इसको उसमें से निकाला। सेवको ने उसमें दूसरा तैल भर कर उसको उकाला और परीक्षार्थ श्रीफल उसमें डाला। वह मध्य में से दो भाग हो कर उछला एक शंख के दूसरा लिखित के ललाट में लग गया। वे नाति प्रसन्न हो कर दौडे सुधन्वा को पकड़ कर उन्होंने इसको कड़ाह में डाला। इसके गिरते ही वह शीतल हो गया। यह यहां नहीं मरेगा। इसको युद्ध में पहुंचादो। इसको भेजते समय इसने कहा—'मन्त्रराजं नृसिंहाख्यं जपता रक्षितं वपुः यशोमयं पावितोहं त्वान्तुपावयितुं स्थितः। येस्मरन्ति च गोविन्दं सर्वकामफलप्रदम्। तापत्रयविनिर्मुक्ता जायन्ते दुक्ख वर्जिताः। जै०' पुरोहितों ने राजा से कहा यह नृसिंह भक्त है। इसको वे बचा लेते हैं। इसको युद्ध करने की आज्ञा दीजिये। राजाने एवमस्तु कहा। इसने पद्मव्यूह से सेना की रचना करी। उसमें सुरथ, सुमती, वीरकेतु, तीव्ररथ, शतधन्वा, महारथ आदि वीर थे। वे सब सत्य शील, एक नारीव्रत, धारी थे। अर्जुन की तरफ से प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, यौवनाश्व, अनुशाल्व, कृतवर्मा, सात्यकी, वृषकेतु, नीलध्वज आदि वीर आगे बढ़े। इनका परस्पर युद्ध प्रारम्भ हुआ। प्रथम सुधन्वा ने प्रद्युम्न आदि वीरों को मूर्छित किये पश्चात् सेना को भगा दी। अर्जुन ने सुधन्वा की बड़ाई करी तेरे सम वीर एक तु ही देखने में आया है। इसने उत्तर दिया यहां सारथि श्री कृष्ण नहीं है। तू तेरा विजय चाहता होय तो श्रीकृष्ण को सारथि बनाले नहीं तो तेरे अश्व से महाराज हंसध्वज यज्ञ करेंगे। अर्जुन ने क्रोध करके सुधन्वा को परास्त करना चाहा। उसका प्रयत्न निष्फल गया। उसने अग्नि शस्त्र इसने पर्जन्यास्त्र। उसने वाटवास्त्र। इसने पर्वतास्त्र चलाकर सेना को बचाली। इसने उसके धनुष को तोड़ कर सारथि को मार दिया। उसने व्यथित हो कर श्री कृष्ण को याद किये वे

प्रथम सुधन्वा की माता को दर्शन दे कर फिर अर्जुन के रथ पर आ बैठे। उन्होंने इससे कहा तेरी प्रतिज्ञा पूरी हो गई है। यह राजी हो गया। इस राजा ने उनके दर्शन करके नेत्रों को कृतार्थ किये। यह फिर अर्जुन से बोला वीर तुम कितने बाणों में युद्ध समाप्त करोगे। अर्जुन बोला मैं तीन बाण में तेरे को न मार गिराउं तो मेरे पूर्वज घोर नरक में गिरे। यह बोला मैं तेरे बाणों को न तोड़ दूं तो घोर नरक में पडूं। इसने सो बाण कृष्ण को और दस बाण अर्जुन को मारे। जिससे उसका रथ उनके सहित कुलाल चक्र सम घूमने लगा। श्री कृष्णजी बागडोर सम्भालना भूल गये। ध्वजा के हनुमान कांपने लगे। अर्जुन व्याकुल हो गया। रथ चार सो हाथ पीछे हट गया। जब रथ रुका तब सचेत हुये। श्री हरि ने कहा देखा इसका पराक्रम। बिना विचार प्रतिज्ञा करना यह ही भूल है। जयद्रथ को मारने की प्रतिज्ञा में कितनी कठिनाइयां आई थी। सुधन्वा में एक स्त्री व्रत की पुण्याई है। वह नहीं तो तेरे में और न मेरे में। वह बोला नाथ! आपकी आज्ञा से अश्वमेध का प्रारम्भ हुआ है। आपकी आज्ञा से मैं अश्व रक्षक चुना गया हूँ। अश्व को सुधन्वा ने पकड़ लिया है। वह युद्ध किये बिना घोड़ा को देता नहीं है। दूसरा कोई उपाय है हो नहीं। मरना मारना शूरों का काम है। मैंने प्रतिज्ञा आपके विश्वास पर करी है। ब्रह्माण्ड का भस्म करने वाला अग्नि आपकी कृपा के बिना तृण का कुछ नहीं कर सकता। तृण पर आपकी कृपा है तो वह भी समर्थ हो जाता है। आपका अपनाया हुआ जन सर्व शक्तिमान हो जाता है। आपका कथन मेरी दृढ़ता की परीक्षा के लिये है। आपकी अनुकम्पा से मैं विजय प्राप्त कर सकता हूँ। अर्जुन ने श्री कृष्ण का स्मरण कर के धनुष पर बाण चढ़ाया। उस बाण पर श्री कृष्ण ने इन्द्र कोप से जनता गोकुल की को बचाने का पुण्य प्रदान किया। बाण में

से अग्नि की ज्वाला उत्पन्न हो गई। उसको उसने छोड़ा। इसने बाण से प्रबल बाण को काट गिराया। अर्जुन ने दूसरा बाण धनुष पर चढ़ाया। उस पर भगवान ने श्री कृष्णावतार की शेष रही पुण्याई लगा दी। उनके पुण्य प्रताप से बाण कालाग्नि सम हो गया। उससे वह बाण ठहराया नहीं गया। चञ्चल बाण स्वयं छूट कर लपलपाता हुआ इसका मस्तक काटने दौड़ा। यह बोला—अर्जुन तेरे पर भगवान की पूर्ण कृपा है। जो निज के पुण्य को क्षीण कर रहे हैं। तेरा विजय होना मेरे को प्रतीत होता है तथापि इस बाण को मैं अभी काट देता हूँ। इसने बाण उठाया वह बाण अर्जुन के बाण के दो टुकड़े कर के वापस सुधन्वा के समीप चला गया। देखने वालों में खलबली मची। हंसध्वजादि प्रसन्न होने लगे। सुधन्वा ने शंख बजाया। इसको कुछ मद आगया वह इसके नाश का कारण बन गया। श्री कृष्णार्जुन ने भी शंख बजाये। उसने तीसरा बाण चढ़ाया श्रीकृष्ण ने अग्रभाग में निज की शक्ति को मध्य में काल को पृष्ठ पर ब्रह्मा को बैठा कर बाण को दृढ़ बनाया। फिर श्री रामचन्द्रावतार की पुण्याई जितनी थी वह सब उस पर लगादी। वह बाण ऐसा बन गया कि उसको धीर देख न सके वे भाग निकले। यह बोला—भगवन्! आपने मेरे वध के लिए बाण को दृढ़ बनाया है मैं जान गया। आप जिससे अति प्रेम करना चाहते हैं उसको निज लोक में पहुंचा देते हैं। अर्जुन तू भी हुसियार हो रहना। वह बोला—मेरे मस्तक को इस बाण से न काट दूं तो शिव विष्णु में भेद मानने वालों के सम मेरे को पाप लगे। इसने कहा मैं तेरे इस बाण को काट दूं तो वह पाप मेरे को लगे जो शिव पूजा को पैर से मिटाने वाले को होगे। अर्जुन का बाण चला। सुधन्वा ने श्री कृष्ण को कहा मैं तुमको नृसिंह भगवान के स्वरूप में देख रहा हूं इससे मेरे को निश्चय हो गया मेरे भगवान ने मेरे को छोड़ दिया।

अस्तु। अब मेरा जीवन शेष नहीं रहा। मेरे घर वाले हंसेंगे कि तुम कृष्णजी से लड़ने गये थे फिर उनसे क्यों नहीं लडे। प्रथम मेरे से आप लड़िये। प्रलयकारी बाण आगया। इसने श्री नृसिंह जी का ध्यान करके बाण छोड़ा। इसके बाण ने उस बाण को काट दिया। पिछला भाग नीचे गिर गिया। अग्रभाग इसके कण्ठ में लगा। मस्तक कट कर नृसिंह, राम, केशव, गोविन्द कहता हुआ श्री कृष्ण की गोद में जा गिरा। उसमें का तेज निकल कर श्री कृष्णजी के मुख में लीन हो गया। मस्तक को हाथों में लेकर उन्होंने अश्रुपूर्ण नेत्रों से देखा फिर कहा इसके सम पृथ्वी तल पर वीर होना असम्भव है। इसका प्राण नष्ट करा कर मैंने जन कलङ्क लिया। यह श्रेष्ठ नहीं हुआ। इससे डर कर इसको मैंने यह मुक्ति प्रदान करी है वह अन्य के लिए नहीं। ऐसा कह कर मस्तक को इन्होंने हंसध्वज की गोद में फेंक दिया। उसको उसने हृदय से लगाया फिर वह रोया। उसने धैर्य का अवलम्बन करके उसने उसको वापस श्री कृष्णजी की गोद में फेंक दिया। श्रीकृष्ण जी ने उसे ले कर गरुड़ के हवाले किया। देवर्षि नारद के कहने से भोले बाबा ने उसे मंडवा कर रुण्ड माला में उसका सुमेरु बनाया। यह सुधन्वा का मंगलप्रद चरित्र है। 'बालो वातरुणोवृद्धः स्त्रीपुमान् देवकी सुतम्। स्मरत्यहर्निशं पार्थ कृच्छ्रान्मुक्तो न संशयः। जै०'

पत्र २३

सुरथ—यह स्मरण प्रेमी भक्त था। यह हंसध्वज का पुत्र तथा सुधन्वा का कनिष्ट भ्राता था। सुधन्वा के मरने से विकल हुये पिता को देखकर इसने उनसे कहा—पिताजी! आप अब देखिये मेरे और कृष्ण के युद्ध को। भ्राता का बदला हातों हाथ चुकाता हूँ। ऐसा कह कर इसने श्री कृष्णार्जुन से कहा। तुम खड़े रहो मैं युद्ध का मजा चखाये देता हूँ। कृष्ण! तू चीण

पुण्य है। मुक्ता देकर तैंने बैर खरीदे है। आखिर तो ग्वाल ही है। श्री कृष्णजी ने अर्जुन से कहा। सत्य है मैंने युधिष्ठिर के कहने में लग कर प्राण प्रिय भक्तों का अप्रिय कर दिया और करना होवेगा। क्या किया जाय क्षत्रिय धर्म भी वैसा ही है। अस्तु। मैं तेरे को कहता हूँ। सुरथ भ्राता के मरण से सन्तप्त हुआ आ रहा है। उसके सामने तेरे को नहीं जाना चाहिये। उससे ब्रह्मा भी डरता रहता है कि कहीं यह बिगड़ कर सृष्टि का प्रलय नहीं कर देवे। हम दोनों प्रथम इसके सामने नहीं जावेंगे। 'यतो पुण्यस्ततोजयः' इस न्याय से पुण्यवानों का विजय है। हम उसके सामने क्षीण पुण्य हैं। भगवान प्रद्युम्नादि वीरों को खडे करके अर्जुन सहित तीन योजन पीछे रण से हट गये। सुरथ ने देखा श्री कृष्णार्जुन नहीं अन्य वीर खडे हैं। इसने उनसे पूछा अरे वे कहां है। उन्होंने कहा क्लीव! व्यर्थ क्यों चिल्लाता है। बकवाद करना कायरों का काम है। वीर सन्मुख खड़े शूरों को परास्त करके फिर और की तलाश करते है। इतना कहना ही था यह कालसम उन पर टूट पड़ा इसकी बाणाग्नि वर्षा ने युद्ध क्षेत्र को खाली कर दिया। आगे बढ़ कर वह श्री कृष्णा र्जुन के समीप जा पहुंचा। पहुंचते ही इसने उन दोनों को घायल किये। अर्जुन ने सचेत हो कर इसके धनुष रथ को तोड़ सारथी घोड़ो को मार गिराये इसने दूसरे रथ पर चढ़ कर उससे घोर घमसान युद्ध किया। श्री कृष्ण ने उससे कहा अर्जुन! देखा इसका युद्ध में भाग कर आ गया तो भी यह पीछा नहीं छोड़ता है। इसकी इच्छा सब को मार डालने की है। वह बोला—देव! आप चिन्ता न करें। मैं इसे अभी मार गिराउंगा। उसने इसको इतने बाण मारे जिस से वह उड़ कर आकाश में चला गया। इसने शीघ्रही पृथ्वी पर आकर दोनों को ऐसे बाणों से प्रहार किया कि रथ सहित वे कम्पायमान हो गये। भगवान के पैर के अंगुठे से दबा हुआ रथ

रुका नहीं फिरता ही रहा। विकल हुऐ दोनों ने शङ्ख नाद किया। उसने इसकी विरथ किया। ध्वजा के हनुमान ने पूंछ से रथ को बांध कर रोका तब रुका। सुरथ टूटे रथ को त्याग करके आया। इसने उस रथ को हाथों से उठा कर श्री कृष्णा अर्जुन और हनुमान के सहित ऐसा घुमाया कि उनको सम्भलना कठिन हो गया। अर्जुन ने धैर्यता से इस को मर्म भेदी पान्च बाण मारे। जिस से उस को मूर्छा हो आई और उस के हाथों से रथ नीचे गिरगया यह शीघ्र उठ खड़ा हुआ। अर्जुन सुरथ के परस्पर अर्ध चन्द्र, वत्सदन्त, शिलीमुख, वाराह, कर्ण, नालीक, क्षुरप्र, कण्टकमुख, आदि बाणों से युद्ध हुआ। अर्जुन बोला मेरी प्रतिज्ञा है तेरे को तेरे पिता के सामने मार गिराउंगा। इसने कहा मैं तेरेको रथ के नीचे गिरा दूंगा। फिर युद्ध छिड़ा उसने इसके एक सौ आठ रथ तोड़ दिये। इसका दाहिना हाथ भी काट दिया। इसने बांये हाथ की गदा से सवार सहित एक सहस्र हाथी मारे और उन दोनां को मूर्छित किये। फिर दो सहस्र रथ, दस सहस्र घोडे, सवार सहित को मारे। दस सहस्र प्यादों को भी मारे। उसने इसका दूसरा हाथ भी तोड़ दिया। बिना हाथ का यह अर्जुन के सामने दौड़ा। उसने दो बाण से इसका हृदय छेद दिया, दो बाणों से पैर तोड़ दिये। फिर माथा काट दिया। इसका मस्तक श्री कृष्ण की गोद में जा गिरा। कबन्ध अनेक सैनिकों का विध्वंश करता हुआ अर्जुन के माथे से टकराया जिससे वह मूर्छित हो कर रथ से पृथ्वी पर गिर पड़ा। श्री कृष्ण ने कहा देखा सुरथ को। वह बोला आज आप नहीं होतेतो मैं अवश्य माराजाता। धन्य है इस को इसका मस्तक मेरे को दीजिये भक्त रत्न को प्रणाम करूंगा। सुरथ का तेज श्री कृष्ण में लीन हो गया। भगवान ने गरुड़ को याद किया। वह आ गया। उसको प्रयाग राज की त्रिवेणी में छोड़ने को दिया। गरुड़ ने हँस कर प्रभु से कहा—प्रभो इसको

आपके हाथों का स्पर्श और इसका तेज आप में मिल गया। फिर और प्रयाग कैसा। आज्ञा का पालन करना है। इसका मस्तक ले-कर गरुड़ चले। देवर्षि द्वारा पता चलते ही शिवजी ने भृंगी गण को भेजा सुरथ का सिर गरुड़ से ले आओ। उसको गरुड़ ने उड़ाकर कैलाश पर फेंक दिया। पार्वती हँसी शिवजी ने नन्दी को भेजा। उसने श्वास द्वारा गरुड़ को परास्त किया। मस्तक ले वह वापस आगया। उसको बाबा ने सुमेर में रक्खा। ऐसे दोनों भ्राताओं के मस्तक शिवजी ने हृदय पर स्थापन किये। इत्यलम्।

पत्र २४

हंसध्वज—यह स्मरण भक्त था। चम्पका नगरी नरेश तथा मधुच्छन्दों का वंशज था। इसके पांचों ही पुत्र श्री कृष्ण के सामने अर्जुन द्वारा मारे गये। यह क्रोधाकुल हो कर आगे बढ़ा। पृथ्वी कांप गई। शेषजी हिल गये। अर्जुन का कलेजा दहल गया। श्री कृष्णजी रथ से नीचे खड़े हो गये। वे आगे बढ़ कर आये। उन्होंने राजा को पकड़ करके हृदय से लगाया फिर कहा राजेन्द्र! आपकी पुण्याई द्वारा उत्पन्न पराक्रम को मैं जानता हूँ। आप प्रलयकारी क्रोध को शमन कर लेवें। आपके पुत्रों को योगेश्वर गति से भी परमोच्च पदवी प्रदान करी है। उनके मस्तक शिव की रुण्डमाल के सुमेरु बने हैं। अतः वे स्मरणीय हैं। ऐसी बात के सुनते ही राजा का क्रोध दूर हो गया। प्रेमाश्रु धारा का प्रवाह चल गया। मनमें उसने विचारा कि अहोभाग्य मेरा जो श्री कृष्ण ने रथ से उतर कर हृदय से लगाया। अर्जुन शरण में आ गया। मेरा विजय हो गया। राजा ने कृष्णजी का आलिंगन किया। गोविन्द! जो कृपा अभी तक किसी पर न हुई वह मेरे पर हुई है। मेरा विजय हो गया। इस बात की खुशी में मैं पाण्डवों का घोड़ा वापस करता हूँ। चलिये घर को। श्री कृष्णार्जुन गये उनका महोत्सव से स्वागत हुआ। श्री कृष्णजी ने कहा राजेन्द्र!

आप देखिये अर्जुन मेरा प्राण है। मैं कहीं भी रहूँ इसके याद करते ही आकर इसकी रक्षा करता हूँ। इसको मैंने आज से आप की शरण में दिया है। इसकी रक्षा आप करें। राजा ने स्वीकार किया। उन्होंने पांच दिन वहां निवास किया। भगवान महाराज धर्म के समीप पधार गये। राजा छटवें दिन अर्जुन के संग विदा हुआ। इत्यलम्॥

पत्र २५

ताम्रध्वज—यह स्मरण साधन प्रेमी था। यह मयूरध्वज का पुत्र था। इसने पिता को सात अश्वमेध कराये। आठवें यज्ञ का घोड़ा छोड़ा गया। उसकी रक्षा के लिए यह था। रास्ते में अर्जुन का घोड़ा मिल गया। उसकी रक्षा के लिए श्री कृष्ण, अर्जुन, बभ्रुवाहन, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, हंसध्वज, अनुशाल्व, वृषकेतु, मेघवर्ण आदि योद्धा थे। दोनों घोड़ों की मुठभेड़ होने से उनका युद्ध होने लगा। उसके घोडे ने उनके घोडे को परास्त कर दिया। इसने सेनापति द्वारा सब बातें जान लीं। उनके अश्व को इसने निज के घोडे से बांध दिया। फिर व्यूह रचना से सेना को खडी कर दी। इसको सेनानी ने कहा। आप के वश हो कर एक भार मोती प्रति वर्ष देने वाला बभ्रुवाहन है। उसके विवश श्री कृष्णार्जुनादि योद्धा हैं। राजकुमार बोला—मैंने देवर्षि नारद से सुना है श्री कृष्णार्जुन श्री नारायण नर के अवतार हैं। मैं आज इनका पराक्रम भी देखूंगा। श्री कृष्ण ने इसको देखकर अर्जुन से कहा वीर आज महान जन क्षय होने वाला है। गूढ़ व्यूह से तुम तुम्हारी सेना को खडी करो। शत्रु ने अर्ध चन्द्र से सेना सजाई है श्री कृष्ण दिव्य रथ में विराजे। उसमें शैब्य, सुग्रीव, मेघपुष्प, बालाहक ऐसे चार घोडे तथा दारुक सारथी था। वैसा ही उन्होंने किया। इसने श्री कृष्ण को मन द्वारा प्रणाम करके कहा। भगवन! आपको मैं जानता हूँ। अर्जुन की रक्षा के लिए आये हैं। क्षात्र धर्म

विकट है। उसमें पूज्यपाद भी शत्रु हो रहते हैं। मैंने प्रथम ही आपको परास्त करके हृदय में बांध रक्खे हैं। वह पारमार्थिक था। आज का युद्ध व्यवहारिक है रण वाद्य ने वीरों को वीर रस में सन दिये। इसने सत्तर बाण अर्जुन को, पांच कृष्ण को, तीन दारुक को एक एक घोडों को मारे जिससे उनको मूर्छा आ गई। ऐसे समग्र वीरों की वही दशा करी। एक हंसध्वज मूर्छा से बच रहा। जैसे काल के सामने जीव निःसत्व हो जाता है वैसे इसके सामने अर्जुन के समग्र वीर। अर्जुन ने उठकर इसका रथ तोड़ दिया। सुचित्र ने अर्जुन के घोडे सारथी को मार डाले। इस प्रकार इनके परस्पर सात दिन पर्यन्त घोर घमासान युद्ध रहा। सुचित्र ने रथ सहित अर्जुन को आकाश में ले जाकर पृथ्वी पर मारा। श्री कृष्ण ने उसको हाथ पर ले लिया। इसने श्री कृष्णार्पणमस्तु कहा। श्री कृष्ण ने इसके मूधी में गदा का और हृदय में लत्ता प्रहार किया। इसको जरा सी मूर्छा हो आई। फिर यह उठा इससे श्री कृष्णार्जुन का युद्ध होने लगा। यह युद्ध एक साथ था। इस एक ने पैने बाणों से दोनों को मूर्छित कर दिये। श्री कृष्ण ने जाग कर सुदर्शन द्वारा इसकी सेना का विध्वंस किया। यह बोला आपने जो कुछ भी किया श्रेष्ठ किया। अब आप अर्जुन का भला करना चाहते हैं तो उसके सारथी हो जावें। वे उसके रथ पर जा बैठे। यह बोला काच को लेने गया मणी मिल गई। आप को लिए बिना नहीं जाने का। इसने दौड़ कर एक हाथ से दोनों हाथ दूसरे हाथ से दोनों पैर पकड़ कर श्री कृष्ण को शिर पर बैठा लिए। एक हाथ से उनको और दूसरे हाथ से अर्जुन को पकड़ कर पैरों में दबाया। श्री कृष्ण ने माथे में मुष्टि प्रहार किया। जिससे यह गिर पड़ा। पडे हुए ने उन दोनों को पकड़ कर रण क्षेत्र में खूब घसीटे जिससे वे मोह वश हो गये। ताम्रध्वज ने देखा दोनों घोडे रत्नपुर को जा रहे हैं।

काम वन गया। इन दोनों से क्या प्रयोजन है। शत्रु परास्त हो गये। अब यहां क्या करना है। चलना चाहिये। यह शेष रही सेना को लेकर पुर को गया। इसने पिता को प्रणाम करके दोनों घोडे उनके सुपुर्द कर दिये। इत्यलम्।

पत्र २६

मयूरध्वज—यह अनन्य स्मरण भक्त था। यह रत्नपुर नरेश ताम्रध्वज का पिता था। राणी भी राजा सम भक्त श्रद्धालु थी। इनका दान, साहस, सराहनीय था। श्री कृष्णजी ने अर्जुन के सामने कई वार इनकी प्रशंसा करी थी। जब ताम्रध्वज से परास्त हुये श्री कृष्णार्जुन उठे तब अर्जुन ने श्री कृष्णजी से कहा वह वीर कहां चला गया उसको मार कर मैं विजय प्राप्त करूं। उन्होंने कहा मेरे भक्तों में अतुल वल रहता है। उनके सामने मेरी वश नहीं औरों की क्या कथा। वह घोडे लेकर उसके नगरको चला गया। उसका पिता मयूरध्वज महान प्रतापी वीर है उसके सामने समस्त जगत् तृणवत है। उससे युद्ध करके तुम अश्व प्राप्त नहीं कर सकते। याचना द्वारा अश्व मिल जावेगा। हम दोनों याचक वन कर जावेंगे उसमें हमारी यात्रा सफल होगी। वहुत अच्छा कह कर द्विज पिता पुत्र के रूप में वे गये। मयूरध्वज ने दोहरी को देख कर कहा। पुत्र इतने दिन तुम कहां रहे। अश्वमेधीय अश्व वारह मास में आ जाना चाहिये। तुम तेरह मास में पहुँचे। इसका कारण और दूसरा अश्व किस का ले आये कहो वह वोला—पिताजी! आपकी आज्ञानुसार अश्व रक्षक मैं था। मैं अवश्य समय पर आ जाता। पर दूसरा अश्व के लेने में श्री कृष्णार्जुन से युद्ध छिड़ गया। आगे क्या हुआ वह वहुलाश्व सेनापति से पूछ लेवें। सेनापति ने सविनय राजा को कहा। आपके अश्व ने धर्मराज के अश्व को परास्त किया और उसको लेकर आपका अश्व नगर को चला आया। राजकुमार शत्रुओं को

परास्त करके पीछे से आ पहुँचा। राजा नाति प्रसन्न हो कर बोला—तात! तैने आज अनुचित किया जो कृष्णार्जुन को छोड़ दिये। शत्रु हाथ में आ गया फिर उसको छोड़ कर कौन वीर घर को लौट जाता है। कदाचित चला गया तो वह वीर नहीं कायर है। उसकी अपकीर्ति होती है। मेरा यज्ञ उनके आने से पूर्ण हो जाता था। विजय शब्द सार्थक तब ही होता है जब शत्रु को मार दे अथवा बन्दी बना कर घर को ले आये। व्यर्थ विजय मान लेना इस समस्या की पूर्ति में असमञ्जस बना रहता है। युद्ध अपूर्ण रहा। जयाजय का निश्चय दोनों ओर नहीं। निश्चय हुये बिना किसी की वस्तु का लाना चोरी है। तू पुत्र रूप में शत्रु है। जैसे कुलटा अपने समीप पति को आया देख सो जाती है। वैसे ही उनको छोड कर तेरा आना है। तैने तुलसी को त्याग कर के भृंगा को ग्रहण करी है। अन्याय द्वारा प्राप्त हुये अश्वों से मेरा पवित्र यज्ञ समाप्त नहीं हो सकता। मेरेको वह स्थल चलकर दिखा मैं वहां जाकर उनसे युद्ध करूं। राजाने युद्धके लिए प्रस्थान किया। इतने में द्वार पर याचक आ गये। उन्होंने बिना प्रणाम किये राजा को आशीर्वाद दिया तेरा कल्याण हो वे। राजा बोला—साधो! आपने यह क्या किया। मैंने स्वागत करके नमः नहीं किया उसके प्रथम आपने आशीर्वाद कैसे दे दिया। कहा है 'नमस्कारं विना विप्र स्वस्ति ब्रूते जनाय यः। शापेन किं ततः कार्यं तस्माद्युक्तं नते कृतम्, राजा वृद्ध के चरण में गिर गया। उसने उसको उठा कर कहा 'नमस्कारं विनाविप्रैः स्वस्तिवाच्योनराधिप। विज्ञप्तिकालेत्वपरै नमस्कार्यो महीपतिः। ३-८। ४५ जै०।' राजा ने सेवा के लिए उसकी प्रार्थना करी। वह बोला मैं धर्मपुर से पुत्र का विवाह करने चला। रत्नपुर में राज पुरोहित कृष्ण शर्मा की कन्या से। रास्ते में सिंह मिल गया। उसने मेरे पुत्र को पकडा। मै ने नृसिंह भगवान का स्मरण किया वे नहीं आये मै दीन हो गया। सिंह ने मनुष्य

वाणी में बोल कर कहा द्विज ! तू इसको बचाने का व्यर्थ परिश्रम मत कर। मेरे से इसको बचाने वाला कोई है ही नहीं। तुम घर को चले जाओ। विचार मत करो। मुझ हिंसक के सामने अधिक न ठहरो। तुम उत्तम लोक को चाहते हो तो दूसरा पुत्र उत्पन्न कर लो। मैंने कहा मृगेन्द्र ! तू इसको छोड कर मेरे को खाजा। उसने कहा तेरा जीवन अभी बहुत है। इसका आयु शेष नहीं रहा। मैंने कहा इसका आयु बहुत है इसे तू मत खा इसके बचने का कोई उपाय होय तो बतादे। सिंह ने कहा तुम पुत्र को बचाना चाहते हो तो मयूरध्वज राजाका आधा शरीर ला देओ उसे खाकर इसे छोड दूंगा। मैंने कहा राजा इसके लिए सुन्दर शरीर को कैसे विगाडेगा। दूसरा उपाय बतादे। वह बोला तुम उसके समीप जाओ वह कर्ण दधीचि सम दानी है। कभी ना नहीं करेगा। यशस्वी यश को चाहते हैं देह को नहीं। उसका वचन मानकर आपके सम्मुख आया हूँ। भगवान श्रीराम ने द्विज पुत्र को सजीव किया था। आप भी इसको जीवदान देवें। राजा ने कहा द्विज ! मेरे देहार्ध के देने से आपके पुत्र का प्राण बच जाय तो मैं तैयार हूँ। राजा ने करपत्र वालों को बुला करके कहा तुम मेरा आधा शरीर चीर कर वृद्ध द्विज को देदो। यह बात फैल गई जनता ने कोला हल मचाया। राणी ने आकर राजा से कहा द्विज अंग आधा ही चाहते है। मैं अर्द्धांगनी हूँ मेरे को प्रदान कर देवें। विप्र बोला बात तो ठीक है पर स्त्री वामांग है सिंहने दाहिना मांगा है। ताम्रध्वज आया उसने कहा पुत्र पिता का दाहिना अंग होता है मेरे को प्रदान कर दीजिये। द्विज बोला ठीक है। पर सिंह का कहना था कि स्त्री पुत्र द्वारा भिन्न राजा का दाहिना अंग। इस कार्य में किसी को दुक्ख, रुदन, ग्लानी न होने पावे। राजाने उन को समझा करपात्र उनके हाथ में दिया। निज के शरीर को बन्ध वा कर ऊपर निशान करा दिया। भ० श्री कृष्ण के समर्पण होवे।

कह कर वह केशव, राम, नृसिंह, नारायण, के नामों का उच्चारण करने लगा। स्त्री पुत्र ने करपात्र लेकर मस्तक पर चलाया। राजा ने कहा चलाये जाओ मेरे को किसी प्रकार की तकलीफ नहीं है। नाक पर्यन्त करपत्र पहुंचा। राजा के बांये नेत्र से अश्रु आ गया। द्विज लाल पीला हो गया। कायर मैं श्रद्धा हीन दान नहीं चाहता। राजा ने कहा बांये नेत्र ने आप से विनय की है कि मैंने कौनसा पाप किया जो द्विज ने मेरा दान अंगीकार न किया। राजा की बात को सुनते ही द्विज राजी हो गया। श्री कृष्ण ने प्रत्यक्ष होकर उसको दर्शन दिया। करपत्र को फेंक दिया। निज के कोमल कर कमलों से स्पर्श किया। राजा पूर्ववत् स्वस्थ हो गया। उसको बन्धन से खोल कर हृदय से लगा लिया और कहा राजा तुम को धन्य है ऐसी कठिन परीक्षा से भी उत्तीर्ण हो गया। मैं भक्ताधीन हूँ। मैं तुम्हारे पुत्र द्वारा परास्त हो गया हूँ। अब युद्ध की आवश्यकता नहीं है। दोनों अश्व आपके जीते हुये हैं। तुम इनसे यज्ञ समाप्त करिये। तुमने मेरे को अर्ध शरीर समपर्ण करके हर तरह वश में कर लिया। वह बोला—नाथ! आपको प्रसन्न करने के लिये योग यज्ञादि शुभ कर्म किये जाते हैं जब आप ही प्रसन्न हो गये तब शेष रहे यज्ञ से मेरे को कौन प्रयोजन है। ये अश्व खड़े इनको ले जाकर आप धर्मराज का यज्ञ समाप्त करें। अर्जुन ने प्रगट होकर राजा को प्रणाम किया। उसने उसको हृदय से लगा लिया। ताम्रध्वज ने भ० श्री कृष्ण को प्रणाम करके उनका आशीर्वाद ग्रहण किया। राजा ने यज्ञ सामग्री और घोडे दे कर कहा आप मेरे हृदय मन्दिर में निरन्तर निवास करें। एवमस्तु कह कर भगवान ने आगे को प्रस्थान किया। राजा आयु पूर्ण होने पर भगवान में लीन हो गया। इत्यलम्॥

मैत्रेय—यह स्मरण भक्त था। इसको किसी राजा ने चोरी के अपराध में सूली पर चढ़ा दिया। राजा को इसके जीवित रहने

का पता चला। उसने आकर इसको सूली से नीचे लिए और प्रणाम करके अपराध की क्षमा मांगी। इसने कोई भी उत्तर न दे कर यमराज से सूली मिलने का कारण पूछा। यम ने उत्तर दिया टीड़ी को दर्भ तृण से छेद कर खेले थे। उस अपराध से आपको सूली मिली। इस बात से नाराज हो कर इसने यम को श्राप दिया तुम दासी पुत्र हो जाओ। वह दासी पुत्र विदुरजी हुये। इसने विदुर को भागवत ग्रन्थ सुनाया। धृतराष्ट्र को भक्ति तत्व कहा।

भर्तृ हरी—यह स्मरण भक्त थे। गन्धर्व सेन के पुत्र तथा विक्रम के भ्राता थे। उज्जैन के राजा थे। पिता के मृत्यु के पश्चात इन्होंने राज्य किया। अकस्मात् वैराग्य हो जाने से विक्रमादित्य को राज्य दे कर ये वन में गये। अमर हो गये।

केशवभट्ट कश्मीरी—यह स्मरण भक्त था। यह दिग्विजयी था। इसने नवद्वीप में चैतन्य महाप्रभु से सदोष कविता में परास्त हो कर उनका मन्त्रोपदेश लिया। अहंत्व को त्याग करके प्रभु के दास भाव को ग्रहण किया।

श्री भट्ट—स्मरण भक्त था। इसके प्रेमवश युगलकिशोर सदा इनकी गोद में खेला करते थे।

हरिव्यास—स्मरण भक्त था। निम्बार्क सम्प्रदायी था। इसने श्री भट्टजी की आज्ञानुसार कई बार गिरिराज की प्रदक्षिणा करी। जब यह धौत पाप हो गया तब इसके श्री भट्ट की गोद में राधा कृष्णजी दोनों खेलते नजर आये। इसने उनसे कहा उन्होंने इस को दीक्षा दी। एकदा इसने प्रभु की अनेक लीलाओं का अनुभव करते हुए पञ्जाप की यात्रा करी। किसी ग्राम में राजा की ओर से देवी को सहस्रशः जीवों का बलि चढ़ता था। उनको देख विना दर्शन किये यह वापस लौट गया। उसका देवी पर बड़ा प्रभाव गिरा। देवी ने राजा को स्वप्न में कहा तुम कल से पशु बलि

बन्द कर दो। दूध दही की बलि प्रदान करो मैं वैष्णवी दीक्षा हरि व्यास से लूंगी। तुम भी लेओ। राजा ने वैसा ही किया। इस सम्प्रदाय को हरिव्यासी कहने लगे।

उपमन्यु—यह स्मरण भक्त था। परिवार में इसके एक माता ही रह गई थी। इसने माता से दूध मांगा उसने जल में आटा को घोल कर इसको दिया। इसने कहा मात! आपने जो पदार्थ मेरे को दिया वह दूध नहीं मैंने दूध मामा के यहां खाया था वह बहुत मधुर था। माता बोली बेटा तेरी बात सत्य है। वास्तव में वह दूध नहीं था। तेरे को उसकी आकांक्षा होवे तो तू सदा शिव का स्मरण कर। इसने उसका कहना स्वीकार किया। भोले ने इन्द्र का रूप धारण करके अनेक पदार्थों का प्रलोभन इसको दिया। यह ललचाया नहीं। भक्त भयहारी भोले ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर इसको अपनाया। ऐसे ही

मङ्कणक—स्मरण भक्त था। यह भ० भोले का अनन्य भक्त था। इसको अंगुली कट गई। रक्त बहने लगा। इस बात से यह राजी हो कर नाचने लगा। इसके संग ब्रह्माण्ड नाचने लगा। देवों ने दुक्खित हो कर शिव से कहा। उन्होंने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर समझाया। यह मान गया। देवों का दुक्ख दूर हो गया।

रामकृष्णमुनि—यह स्मरण भक्त था। इसने वेङ्कटाचल पर स्मरण तप किया। इन्द्र ने अति वृष्टि उल्कोपात आदि भयङ्कर विघ्न किये वे सब निष्फल गये। भ० वेङ्कटेश ने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर इसको अपनाया।

भद्रमती—ने भी स्त्री के सहित रामकृष्ण तीर्थ के समीप रह कर भ० श्री निवास का स्मरण किया। भ० व्यङ्कटेश ने इस को भी अपनाया। इस प्रकार—रामानुज तथा पद्मनाभ को स्मरण द्वारा हरि मिले।

सुन्दर स्मरण भक्त था कहते हैं इसको महर्षि वशिष्ठ ने श्राप दिया था कि गन्धर्वाधम तू राक्षस होजा। अतः यह राक्षस होगया। एकदा यह पद्मनाभ को मारने दौड़ा। श्रीरमणने उसको बचाकर इसको पुनः गन्धर्व बनाया। ऐसेही देवमाली और जानन्ती ने स्मरण भक्ति का प्रचार किया। मुद्गल—यह स्मरण भक्त था यह सागर के किनारे जहां से सेतुका प्रारंभ हुआ था रहता था। इसको भ० श्रीरामने अपना लिया था।

सुमेधा—यह स्मरण भक्त था। एकदा इसने हरिमेधा से कहा 'किंपुण्यं तुलसी समंत्रिभुवने, तुलसी जीकी महिमा अपार है। यह भ०धन्वन्तरी के अश्रु विन्दुसे उत्पन्न हुई थी।

हरिमेधा—यह स्मरण भक्त था इसने सुमेधा से कहा। हां आप ठीक कहते हैं। समुद्र मथन के समय उत्पन्न होकर भ० धन्वन्तरीने अमृत कलश पर अश्रु विन्दु डाल दिया था। यह वहां से उत्पन्न हुई थी। मैंने भी यह ही सुना था। इस प्रकार ये दोनों ही भक्त तुलसी जी की महिमा गाते हुये जीवन मुक्त हो गये।

वेङ्कट—यह स्मरण भक्त था। मरते समय पिताने कहा तात! तू मेरे सञ्चित धन को श्रीकृष्णार्पण कर के, निर्भय गोविन्द भजन करना। इसने वैसा ही किया। भ० श्रीरंग ने इसको अपनाया।

त्यागराज—यह स्मरण भक्त भगवान का कृपापात्र हो गया था।

जयधर—यह स्मरण भक्त गृहस्थ था। एकदा स्त्री ने कहा विना अन्न के बाल बच्चे भूखे हैं। उत्तर मिला श्री कृष्ण का स्मरण करो। वे स्मरण भजन करने लगे। भगवान सेठ का रूप लेकर आए। उन्होंने काफी भोजन सामग्री इनको प्रदान करके प्रसन्न किये। वे अदृश्य होगये। इसको कन्या के विवाह करने

की चिन्ता होआई। इतने में एक वृद्ध पुत्र को लेकर आया इसने युवा पुत्र को कन्या प्रदान करदी। यह प्रभुके भजन से पार हो गया।

प्रभुदत्त १ यह स्मरण सेवक झूंसी के रहने वाले हैं। ये दानी, परोपकारी, उदार, शान्त, धीर, प्रतापी, यशस्वी, और समस्त दैवी गुणसम्पन्न है। भ० श्रीकृष्ण के लीला विग्रह के दर्शन इनको प्रत्यक्ष है।

नारायणदास—यह स्मरण भक्त था। यह गायन नृत्य कीर्तन ऐसा करता था कि उस समय इसकी तुलनाका दूसरा नहीं था। यह एक स्थान पर विशेष नहीं रहता था। यात्रा का पर्यटन बना ही रहता था। एकदा यह काशी यात्रा को चला। रास्ते में प्रयाग के समीप दण्डिया ग्राम आया। ग्रामाधीश ने इसका आना सुनकर सामने गया सन्मान सहित इसको लेजाकर पवित्र स्थान में ठहराया। सन्ध्या के समय नृत्य के लिये उसने इसकी प्रार्थना करी। इसने विचारा ग्रामाधीश म्लेच्छ है। इसके यहां मेरे भगवान पधारेगें नहीं। आज का नृत्य भगवान की मालाके सामने होवेगा। विचार के अनुसार इसने राज प्रसाद में नृत्य किया। उसने पारितोपिक द्रव्य दिया इसने श्री गोपालकृष्णजी का स्मरण करके शिष्यों को कहा। मेरेको अति शीघ्र प्रयाग लेचलो। इतना कहकर यह मूर्छित होगया। शिष्य इसको प्रयागसङ्गम पर ले गये। वहां इसकी मूर्छा दूर होगई। इसने स्नान स्मरण किया। इसको श्रीहरिने सायुज्य मुक्ति प्रदान करी।

---

१ इनके हस्तलिखित चैतन्य चरितावली, श्रीबदरीनाथ महात्म्य, महात्माकर्ण, गोविन्द दामोदर माधवेतिस्तोत्रकी टीका आदि ग्रन्थ है।

जगन्नाथ--यह स्मरण प्रेमी है। यह साधु सेवी, उदार, सत्यभाव प्रिय है। परोपकार शील है। यह नाटाणी खण्डेलवाल वैश्य है। गृहस्थ और गेंता ग्राम निवासी है। धर्मशील सद्भक्त है।

मथुरालाल केशरीमल—ये स्मरण भक्त हैं। ये सहोदर भ्राता हैं। साधु सेवी, उपकारी, धर्मात्मा, धीर, सद्गुण सम्पन्न हैं। ये काली सिन्ध के तट पर बड़ोद ग्राम के निवासी हैं। इन्होंने पं० पन्नालालजी सिद्धभक्त की सेवा चाहिये वैसी करी थी। ये आये गये महात्माओं के सेवन में अहोरात्र बने रहते हैं। दोनों ही भ्राता देव प्रकृति के हैं।

उम्मेदसिंह—यह भगवान के स्मरण भक्त थे। धीर, वीर उदार, चतुर, सुहृद, न्याई, करुणादृद्ध थे। इनके प्रत्येक चरित्र प्रशंसनीय थे। उनके उदार चरित्रों को जनता यथाविधि याद करती रहती है। यह कोटा नरेश थे। हाड़ा क्षत्रिय कुल भूषण थे।

गोकुलदासजी—ये मथुरा नरेश भगवान के प्रधान पूजोपहारी थे! अनन्य स्मरण प्रेमी भक्त थे। इन्होंने आजन्म श्री हरि के चरणों का स्मरण पूजन का लाभ ग्रहण किया था। ये कोटा नगर के निवासी थे। इनकी पवित्र कीर्ति पूर्णचन्द्र चन्द्रिका सम फैली हुई है। इनको भ० मथुरेश अपनाये थे।

रघुनन्दन—यह स्मरण प्रेमी भक्त है। गौतम गोड़ द्विज है विरक्त वृत्ति में रहता है इसका सिद्धान्त है 'भक्तिः का स्मरणाधिका, यज्ञानांजपयज्ञोस्मि, इसका मानसिक ध्यान बहुत उत्तम है। यह नित्य हनुमानजी के मन्दिर में जाकर साधुसेवा का लाभ ग्रहण करता रहता है। ये लाखेरी ग्राम के कारखाना में रहता है। साधुसे प्रेम रखता है यह चमत्कारिक मूर्ति है। इसके कई काम भगवान के भरोसे हुये हैं। यह सर्व प्रिय है।

।५७७।

सेवाराम—यह अद्वितीय स्मरण प्रमी है। भ० श्रीराम का भक्त है। साधु सेवा अच्छी करता है। लाखेरी ग्राम का निवासी ग्रहस्थ है। यह सनाढ्य ब्राह्मण है।

शूकानन्द—यस स्मरण भक्त श्री बाबा भोलेनाथ का है। ब्रह्मचारी है। योग्य होकर निजधर्म स्थित है। योगी, गौसेवी, साधुसेवी है। सनाढ्य द्विज हैं

पीताम्बरदत्त—यह स्मरण प्रेमी है। यह साधुसेवी, प्रेमी, तथा दयार्द्र हृदय है। यह बड़ा खेड़ा का निवासी गृहस्थ है। मिलनसार सुष्ठु गुण सम्पन्न है। यह द्विज है।

हरगोविन्द—यह स्मरण प्रेमी है। यह शान्त, दान्त, साधु-सेवी, धर्मात्मा है, । बड़ा खेखा ग्राम निवासी गृहस्थ है। वहां रहकर इसने नरसिंह भगवान की यथोचित पूजाकरी अब परवार को त्याग करके भगवान श्री कृष्णजी को आत्म समर्पण कर वृन्दावन में निवास किया है यह यशस्वी प्रेमी भक्त है। कहते हैं इसको श्री कृष्ण के प्रत्यक्ष दर्शन हुये हैं।

इत्यलम् १८ तृतीयोपुष्पः

र० स्वामी रघुनाथचार्य दाधीच श्री सम्प्रदायावलम्बी खाचरोद मध्यभारत।

ॐ श्रीकृष्णाय गोपीजनवल्लभाय नमः

PRINTED AT :
THE KISMET PRINTERS & PUBLISHERS,
TRIPOLIA BAZAR, JAIPUR.